मानवता व्यावहारिक अनुसंधान के उपरांत प्रस्तुत शोध प्रबंध

अनुसंधान का विषय

समस्त भाषाओं का मेल-जोल, साझा समन्वय, सहयोग और मानवता

के अंतर्गत

'भाषाविज्ञान के माध्यम से समस्त पृथ्वी के मानवों को एक सूत्रता में जोड़ना और विश्व बंधुत्व का निर्माण करना'

शोधार्थी का नाम : डॉ. राहुल दिगंबरराव खटे

पंजीयन संख्या : HR / 369 / 93

दिनांक: 19/11/2024

शोधार्थी का पता : आनंद नगर, मयुर टाकिज के पास, नांदेड

मार्गदर्शक : डॉ. ए. के. जैन

दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केन्द्र

DIVYA PRERAK KAHANIYAN HUMANITY RESERCH CENTRE

An ISO 21001-2018 Certified Reserch Institution

Regd. - Under Indian Trust Act 1882 Government India

पंजीकृत कार्यालय : ठेकमा, जिला- आजमगढ़, उत्तर प्रदेश (भारत)

Edit with WPS Office

शोधार्थी घोषणा पत्र

मैं **डॉ. राहुल दिगंबरराव खटे** (शोधार्थी दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र) घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध जो **समस्त भाषाओं का मेल-जोल, साझा समन्वय, सहयोग और मानवता** के अंतर्गत **'भाषाविज्ञान के माध्यम से समस्त पृथ्वी के मानवों को एक सूत्रता में जोड़ना और विश्व बंधुत्व का निर्माण करना'** व्यावहारिक अनुसंधान का मूल भाग है तथा अप्रकाशित है। इस शोध प्रबन्ध को मैंने **डॉ. ए. के. जैन** के मार्गदर्शन में पूरा किया है। मैं यह घोषणा करता हूँ कि शोध कार्य पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ किया गया है तथा इससे पहले किसी डिग्री डिप्लोमा के लिए उपयोग नहीं किया गया है। मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि मैंने अपना अनुसंधान कार्य **'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र'** के तत्वाधान में सभी नियम व निर्देशानुसार पूर्ण किया है।

दिनांक: 06/01/2025

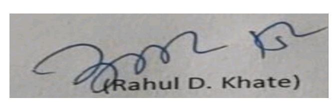

(डॉ. राहुल दिगंबरराव खटे)

शोधार्थी का हस्ताक्षर

Edit with WPS Office

मार्गदर्शक घोषणा पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र'** के अंतर्गत **समस्त भाषाओं का मेल-जोल, साझा समन्वय, सहयोग और मानवता** के अंतर्गत **'भाषाविज्ञान के माध्यम से समस्त पृथ्वी के मानवों को एक सूत्रता में जोड़ना और विश्व बंधुत्व का निर्माण करना'** विषय पर शोधार्थी **डॉ. राहुल दिगंबरराव खटे** द्वारा किया गया प्रस्तुत अनुसंधान मूल व अप्रकाशित भाग है। इनके द्वारा मेरे मार्गदर्शन में यह शोध कार्य किया गया है एवं शोध प्रबन्ध चोरी रहित, बहुत ही उत्कृष्ठ है तथा शोध प्रकाशन के लिए उपयुक्त है।

वर्तमान में यह अनुसंधान कार्य समाज को सही दिशा दिखाने एवं चलने के लिए प्रेरित करेगा तथा भाषा को माध्यम बनाकर मनुष्यों के बीच जो दूरियाँ बनाई गई है उसे भाषा विज्ञान के सिद्धांतो के आधार पर दूर करना । इस तरह का अनुसंधान कार्य, अनुसंधान कर्ता की कार्य कुशलता व सच्ची निष्ठा एवं मानवता के प्रति समर्पण और प्रेम को दर्शाता है।

यह भी प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी ने अपना अनुसंधान कार्य 'दिव्य प्रेरक कहानियाँ मानवता अनुसंधान केंद्र' के तत्वाधान में नियम व निर्देशानुसार पूर्ण किया है।

दिनांक: 10/05/2024

(डॉ. ए. के. जैन)

मार्गदर्शक के हस्ताक्षर

Edit with WPS Office

समस्त भाषाओं का मेल–जोल

साझा समन्वयन एवं सहयोग तथा मानवता

भाषा. भूत, भविष्य, वर्तमान परिपेक्ष्य में व्याख्या

भूतकाल में भाषा का विकास और परिवर्तन देखा जा सकता है। भाषा के विकास के प्रारंभिक चरण में, लोगों ने संप्रेषण के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग किया, जैसे कि इशारे, ध्वनिया¡ और चित्र। समय के साथ–साथ, भाषा अधिक जटिल और विकसित होती गई, और आज हम देखते हैं कि भाषा कितनी विविधता और जटिलता के साथ हमारे जीवन में शामिल है।

वर्तमान काल में भाषा का उपयोग संचार के लिए किया जाता है, और यह हमारे दैनिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हम भाषा का उपयोग अपने विचारों को व्यक्त करने, सूचना को साझा करने और अपने आसपास के लोगों के साथ संबंध बनाने के लिए करते हैं।

भविष्य में भाषा के विकास की संभावनाएं हैं। भाषा के विकास के साथ–साथ, हम देखेंगे कि भाषा कैसे अधिक तकनीकी और विकसित होती जाएगी, और कैसे यह हमारे जीवन को और भी आसान और सुगम बनाएगी। इसके अलावा, भाषा के विकास के साथ–साथ, हमें यह भी देखना होगा कि कैसे भाषा हमारे समाज और संस्–ति को प्रभावित करती है और कैसे हमें इसका उपयोग करके एक बेहतर भविष्य बनाने के लिए काम करना चाहिए।

Edit with WPS Office

भाषा अनुसंधान की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है।

1. भाषा की प्रकति को समझना: भाषा अनुसंधान से हम भाषा की प्रकति, कार्य और महत्व को समझने में मदद मिलती है।

2. भाषा के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन: भाषा अनुसंधान से हम भाषा के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन कर सकते हैं, जैसे कि भाषा का संरचना, भाषा का उपयोग, भाषा का अर्थ और भाषा का सामाजिक संदर्भ।

3. भाषा के विकास को समझना:

भाषा अनुसंधान से हम भाषा के विकास को समझने में मदद मिलती है, जैसे कि कैसे भाषा बदलती है, कैसे भाषा विकसित होती है और कैसे भाषा का प्रयोग बदलता है।

4. भाषा के प्रयोग में सुधार:

भाषा अनुसंधान से हम भाषा के प्रयोग में सुधार कर सकते हैं, जैसे कि कैसे भाषा का प्रयोग अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है, कैसे भाषा का प्रयोग संचार को बेहतर बना सकता है।

5. भाषा के शिक्षण में सुधार:

Edit with WPS Office

भाषा अनुसंधान से हम भाषा के शिक्षण में सुधार कर सकते हैं, जैसे कि कैसे भाषा का शिक्षण अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है, कैसे भाषा का शिक्षण छात्रों को बेहतर ढंग से सिखाया जा सकता है।

भाषाओं के मेल–जोल, साझा समन्वयन तथा मानवता के बीच बड़ा गहरा संबंध हैं। भाषा मानवता के विकास में बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं । मानव ने जो भी आज तक प्रगति की है वह सिर्फ और सिर्फ अपनी भाषा के बल–बूते पर और अपनी संस्कृति से संस्कारों से सीखकर की हैं तथा इतिहास में इसके कई उदहारण आज भी मौजूद हैं। भाषा जहां एक ओर एकता वह सहयोग के सूत्र में जहां हम सबको बांधने का कार्य करती है, वहीं दूसरी ओर इससे लोगों में शांति और सद्भावना का विकास करती हैं । गत वर्ष भारत द्वारा जी–20 के दौरान जो विश्व स्तर पर 'वसुधैव कुटुंबकम्' का मंत्र संपूर्ण विश्व को दिया गया। वह इसी बात का द्योतक हैं कि जहां एक ओर यूक्रेन और रूस तथा फिलीस्तीन और इजराइल युद्ध में लगें हैं उस वक्त हम अपनी भाषा और संस्कृति पर पकड़ होने के कारण हम आज भी शांति के मार्ग पर कायम हैं और पूरे विश्व की अगुआई करने में समर्थ हैं तथा ये वैश्विक कूटनीति का सबसे अच्छा उदहारण हैं। आज भारत बड़े स्तर पर जहां एक और अपनी संस्कृति और भाषा का परिचय दे रहा हैं, वहीं दूसरी ओर अपने स्वदेशी हथियार बेचकर सामरिक व कूटनीतिक शक्ति का भी परिचय दे रहा हैं।

संस्कृति किसी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों के समग्र स्वरुप का नाम हैं, जो उस समाज के सोचने, विचारने, कार्य करने के स्वरूप में अंतर्निहित होता हैं।

'संस्कृत' शब्द का प्रयोग उस भाषा के लिए किया जाता हैं जो न्यूनतम चार सहस्त्र वर्षों से अनवरत भारतवर्ष में प्रचलित रही हैं तथा जिससे इस देश की बहुसंख्यक भाषाओं का विकास हुआ हैं। भारत की अनेक भाषाओं ने इससे पर्याप्त सामग्री प्राप्त की हैं जिसके कारण संस्कृत का वर्चस्व भारत में ही नहीं अपितु समुचे विश्व में था। संस्कृत का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद की ऋचाओं में मिलता हैं यद्यपि उस युग में उस भाषा को संस्कृत नहीं कहते थे। इसका 'संस्कृत'

Edit with WPS Office

नाम वैदिक युग के अवसान के बाद उसका पूर्ण साहित्यिक रूप विकसित एक अन्य भाषा भी 'प्राकृत' के नाम से चल पड़ी थी। इतना ही नहीं सर विलियम जोन्स (1843–1894) ने बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी की तृतीय वार्षिक भाषण माला के क्रम में 2 फरवरी 1843 के दिन व्याख्यान देते हुए कहा था कि, " संस्कृत भाषा की रचना भी बड़ी अद्भुत हैं, यह ग्रीक भाषा से अधिक पूर्ण तथा लातिन भाषा से अधिक विपुल हैं; यह दोनों की अपेक्षा उत्कृष्ट रूप से परिष्कृत भी हैं।" जोन्स ने इन सब भाषाओं के साथ गौथिक, केल्टिक और फारसी को भी एक ही भाषा–परिवार से जोड़कर ऐतिहासिक भाषाशास्त्र की आधारशिला रखी।

विश्व का इतिहास इस बात का साक्षी हैं कि ज्ञान–विज्ञान के हर क्षेत्र क्षेत्र में भारत विश्वगुरू रहा हैं। बहु–भाषी और बहु– सांस्कृतिक विरासत से ओत–प्रोत भारतवर्ष में विज्ञान और विज्ञान लेखन का इतिहास बहुत प्राचीन नहीं हैं। आज वैज्ञान जैसी आधुनिक संकल्पना भारत में ज्ञान का ही एक अभिन्न अंग थी। भारतीय साहित्य का इतिहास विज्ञान की विकास यात्रा का साक्ष्य प्रस्तुत करता हैं। जिस प्रकार से भारतीय जीवन और दर्शन अत्यंत प्राचीन हैं, उसी प्रकार से भारतीय विज्ञान, चिंतन और उसका प्रलेखन भी प्राचीन हैं। इतिहासकारों के अनुसार ऋग्वेद साहित्य पाठ के रूप में उपलब्ध सबसे पुरानी और प्रथम सामग्री हैं। ब्राह्मी लिपि के आविष्कार और उपयोग के बाद लिखित रूप से साहित्य क्रम में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। भारत में पहले गुरूकुल प्रणाली थी। उस समय ज्ञान के दो मार्ग माने गए थे– एक निम्न या द्वैत और दूसरा उच्च या यौगिक। समूचे ज्ञान–विज्ञान को न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदांत समूहों में देखा जाता था। उपर्युक्त प्रणाली से ज्ञात होता हैं कि हजारों वर्ष पूर्व भारतीय चिंतन में आज के सभी वैज्ञानिक विषयों का समावेश था। वेद विज्ञान एक प्रकार से भौतिकी, रसायन, ज्यामिति और गणित, बाइनेरी संख्याओं, खगोल विज्ञान, गणित, बाइनेरी, संख्याओं, खगोल विज्ञान, ब्रह्मांडिकी, तथा आयुर्विज्ञान जैसे विषयों का एक अद्भुत समुच्चय था। भारत में सैंकड़ों–हजारों वर्ष पूर्व ही आज के तथाकथित उन्नत विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विषयों पर चर्चा की जाती रही हैं। उसी प्राचीनकाल में आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और भास्कर, माधव और रघुनाथ जैसे खगोलविदों का योगदान रहा, जिन्होंने नव वैज्ञानिक युग का मार्ग प्रशस्त कर दिया था।

Edit with WPS Office

बच्चा जब दुनिया में आता है तो सबसे पहले माँ के सम्पर्क में आता है। इस तरह बच्चा जिस भी भाषा को सुनना व प्रयोग करना सीखता है वह अपनी माँ से सीखता है। बच्चा अपने घर परिवार में ही सबसे पहले अपने भावों को अभिव्यक्त करना सीखता है। बच्चे का अपने घर के सदस्यों को हाव भाव अभिव्यक्त करते देखने से उसकी अधिगम प्रक्रिया मे विकास होता हैं।

भाषा को सीखना शामिल हो जाता है। अपने घर आस पड़ोस व समुदाय में विचारों की अभिव्यक्ति को बच्चा सीखता है जो कि उसकी मातृभाषा के माध्यम से होता है। लेकिन भाषा वैज्ञानिक इसे बोली कहते है, मां और घर के आस पास के संपर्क से सीखी गई भाषा घर की बोली कही जाती है। यह समाज की भाषा नहीं होती है। उदाहरण के लिए हिंदी की अनेक बोलियां है; जैसे हरियाणवी, राजस्थानी, बुन्देली, खड़ी बोली, छत्तीसगढ़ी आदि परन्तु इनमें खड़ी बोली को ही भाषा माना जाता है और यही हिंदी प्रदेश के लोगों की मातृभाषा मानी जाती है। बच्चा स्कूल आकर भाषा का शुद्ध रूप सीखता है। इस तरह मातृभाषा मां और घर के माहौल से सीखी गई भाषा का परिमार्जित रूप है जो कि समाजी मान्यता प्राप्त या स्वीकृत होती है। प्रो. रमन बिहारी लाल के मत में "भाषावैज्ञानिक कई समान बोलियों की प्रतिनिधि बोली को विभाषा और कई समान विभाषाओं की प्रतिनिधि विभाषा को भाषा कहते हैं। यही भाषा यथा क्षेत्रों के व्यक्तियों की मातृभाषा मानी जाती है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से भी मातृभाषा से तात्पर्य इसी भाषा से होता है"। बच्चा के जीवन की शुरूआत मातृभाषा से ही होती है जो कि उसके जीवन का आधार रखती है जो आगे चलकर उसका भविष्य भी तय करती है। भारत विभिन्नताओं वाला देश है। यहाँ मातृभाषा के रूप में अनेक भाषाएं है जो कि भारत के विभिन्न राज्यों में शिक्षा का माध्यम है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, छत्तीसगढ़ व झारखंड में हिंदी को मातृभाषा के रूप मे मान्यता प्राप्त है। इन राज्यो के स्कूलों में भी शिक्षा का माध्यम हिंदी भाषा को रखा गया हैं।

हमारे देश में प्रत्येक राज्य की अपनी मातृभाषा है और वहां पर शिक्षा का माध्यम भी है। भारत की भाषिक बहुलता को देखते हुए यहां पर पूरे देश में एक ही भाषा को शिक्षा व प्रशासन की भाषा नहीं बनाया जा सकता था। आज अंतराष्ट्रीय संदर्भ को देखते हुए वैश्विक

Edit with WPS Office

स्तर पर अंग्रेजी भाषा का अपना महत्व है। भारतीय संविधान के अनुसार हिंदी को भारत की राजभाषा बनाया गया हैं। यदि हम हिंदी भाषी प्रांतों को देखें तो हिंदी वहां पर मातृभाषा एवं राजभाषा दोनों ही है। अहिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी को अन्य भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। अहिंदी भाषी प्रदेशों की राजभाषा भी हिंदी नहीं है। भारतीय संविधान के प्रावधानों में भी अंग्रेजी को सहराजभाषा का पद प्राप्त है। भारत की बहुभाषिक स्थिति को देखते हुए बच्चों के मानसिक स्तर के अनुसार त्रिभाषा सूत्र बनाया गया है जिसके अनुसार बच्चों को विद्यालयी स्तर पर भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना है। त्रिभाषा सूत्र के अनुसार माध्यमिक स्तर पर बालक को कम से कम तीन भाषाएं पढ़नी होंगी जो कि मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, अंग्रेजी भाषा, अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा की शिक्षा दी जाये। कोठारी आयोग ने भारत में भाषायी विविधता को देखते हुए त्रिभाषा सूत्र में बदलाव किया। आयोग ने भारत में अंग्रेजी भाषा के महत्व को स्वीकार करते हुए माध्यमिक स्तर पर तीन भाषाओं के शिक्षण को अनिवार्य बनाने का सुझाव दिया।

1 मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा की शिक्षा

2 केंद्र की राजभाषा हिंदी या सह राजभाषा अंग्रेजी

3 एक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा जो शिक्षा के माध्यम से अलग हो।

मातृभाषा का सीखना व प्रयोग करना बालक घर और आस पास के माहौल से ही सीख लेता है। अपने हाव भाव को अभिव्यक्त करने लगता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि मातृभाषा को बच्चा स्वाभाविक रूप से सीखता है जबकि दूसरी अन्य भाषा को प्रयासों से सीखता है जो कि प्राकृतिक रूप से नहीं होता है। इस तरह मातृभाषा में बच्चा सहजता व आसानी अनुभव करता है इसलिए स्कूल की भाषा मातृभाषा ही होनी चाहिए।

मनुष्य की भावाभिव्यक्ति व अपने अनुभवों को बांटने के लिए भाषा ही एक सबसे अहम माध्यम है। भाषा के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है। भाषा के द्वारा ही हम एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को अपने सकारात्मक व विकास के अनुभव बांटते है। भाषा की जानकारी व ज्ञान से ही हम दूसरे विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकते है। किसी भी भाषा को अच्छी तरह पढ़ लिखकर हमें अपने विचारों को अभिव्यक्त करने व दूसरे के विचारों को ग्रहण करने में मददगार होते हैं।

Edit with WPS Office

किसी भी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। भाषा के ज्ञान से मनुष्य की सृजनात्मक शक्ति भी बढ़ती है, उसमें मौलिकता भी आती है और वह अपने विचारो को बेहतर ढ़ग से प्रस्तुत कर सकता है। भाषा के माध्यम से व्याकरणिक स्वरूप, वाक्य रचना, वर्तनी व काव्य रचना का ज्ञान प्राप्त होता है। भाषा से विद्यार्थी दुनिया की मुख्य विशेषताओं से परिचित होकर इतिहास, सांस्कृतिक विरासत, राजनीतिक पहलू, वैज्ञानिक व आधुनिक सूचना व तकनीकि से परिचित हो सकते है। साहित्य जो कि इंसान के लिए मनोरंजनात्मक, ज्ञानात्मक, बोधात्मक व अनुभवी ज्ञान का सागर उपलब्ध कराता है। विद्यार्थी उपन्यास, बाल कहानियां, यात्रा वृत्तांत, नाटक, कविताओं को पढ़ कर दुनिया में ज्ञान को प्राप्त करके सृजनात्मकता की और अपना ध्यान लगाता है। विद्यार्थी लेखन कार्य सीखकर अपने विचारों को लेखात्मक स्वरूप दे सकते है। भाषा सीखकर मानव समाज के लिए सृजनात्मक कार्य तथा कोठारी कमीशन के अनुसार भाषाओं का अध्ययन संशोधित त्रिभाषा सूत्र के अनुसार होगा–

(क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा,

(ख) संघ की राजभाषा या संघ की सहचारी भाषा,

(ग)ऐसी आधुनिक भारतीय या योरोपीय भाषा जो क और ख में सम्मिलित न हो और जो शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयुक्त न हो।

अवर प्राथमिक अवस्था में दो भाषाएं – मातृभाषा या (प्रादेशिक भाषा) और संघ की राजभाषा या सहचारी भाषा पढ़ाई जायेगी। अवर माध्यमिक अवस्था में वह तीनों भाषाएं पढ़ाई जायेंगी। उच्चतर माध्यमिक अवस्था मे ं केवल दा ` भाषाएं अनिवार्य होंगी। स्कूल और कॉलेज स्तर पर शिक्षा का माध्यम बनने के लिए मातृभाषा का सर्वप्रथम अधिकार है अतः प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिए। प्रादेशिक भाषाओं में पुस्तकें और साहित्य, विशेष रूप से वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी, तैयार करने के लिए उत्साहपूर्ण कार्यवाही करनी चाहिए। शैक्षिक कार्य तथा बौद्धिक आदान–प्रदान के लिए उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी सम्पर्क भाषा का कार्य करेगी। हिंदी संघ की राजभाषा और लोगों की सम्पर्क भाषा है, इसलिए अहिंदी क्षेत्रों में उसे प्रसार के लिए सभी उपाय किये जाने चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 में कोठारी

Edit with WPS Office

कमीशन की सिफारिशों के आधार पर भाषाओं के विकास का वर्णन किया है।

प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में पहले से ही प्रयोग किया जा रहा है। विश्वविद्यालय के स्तर पर भी प्रादेशिक भाषाओं को माध्यम बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए। दृ माध्यमिक स्तर पर त्रिभाषा सूत्र को लागू करना चाहिए। हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी और अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा जो कि दक्षिण भारतीय भाषा को अपनाया जा सकता है। अहिंदी भाषी राज्यों में हिंदी और अंग्रेजी के साथ एक प्रादेशिक भाषा पढ़ानी चाहिए। उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी और अंग्रेजी में उपयुक्त पाठ्यक्रम होने चाहिए जिससे विद्यार्थी इन भाषाओं में दक्षता हासिल कर सकें। भारतीय संविधान के 351 अनुच्छेद के अनुसार हिंदी के विकास के हर सम्भव प्रयास होने जाना चाहिए। हिंदी को एक सम्पर्क भाषा के रूप मे ं विकसित किया जाना चाहिए ताकि हिंदी भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों के लिए अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। संस्कृत को विद्यालयों तथा विश्वविद्यालय स्तर पर पढ़ाने के लिए सुविधाओं को बढ़ाना चाहिए। दृ विश्व की अन्य भाषाओं व अंग्रेजी के अध्ययन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। चिंतन करके श ुभ कार्य की ओर अग्रसर होता है।

लेकिन आज भी हमारे सामने राष्ट्रीय एकता और अचांडता एक चुनौती बन की खड़ी हैं, कि कहीं जरा से आघात से यह पूरी इमारत गिर न जाए? यहां कुछ–कुछ परिस्थिति पति पत्नी के रिश्ते की तरह हैं कि जैसे जरा सा विवाद भी उनके रिश्ते में आशंकाएं भर देता हैं। यहां अनेक पंथ, भाषाएं बोलियां और विभिन्न संस्कृतियों के साथ–साथ भिन्न आचरण, सोच और दर्शन हैं संस्कृतियों की भिन्न शाखाएं और उप–शाखाएं हैं। छोटी–बड़ी मिलाकर सत्ताकामी राजनीतिक पार्टियों का भी आज के दिन यही अंबार हैं। यदि हम अपने ही देश में देखे तो भाषा और संस्कृति को आधार बनाए हुए यहां 1500 से अधिक क्षेत्रीय राजनैतिक पार्टियां हैं (चुनाव आयोग 2024 रिपोर्ट) अर्थात भारत में कई भेदक मौजूद हैं। वहीं दूसरे हाल में विश्व स्तर पर सोवियत संघ को टूटते हुए हम सब लोगों ने अपनी आंखो से देखा हैं। इधर पूरा

Edit with WPS Office

विश्व आतंक की चपेट में हैं यूक्रेन–रूस युद्ध और इजराइल फिलीस्तीन युद्ध कोई सामान्य युद्ध नही हैं अपितु यह अपनी भाषा और संस्कृति को सुरक्षित करने का संघर्ष हैं। यहां अपने देश की संस्कृति, और उसकी आत्मा की गहरी पहचान कर मुहम्मद इकबाल की कुछ पंक्तियां याद आती हैंः–

" यूनान मिश्र रूमा सब मिट गए जहां से

अब तक मगर हैं बाकी नामों निशा हमारा

कुछ बात हैं कि हस्ती मिटती नहीं हमारी

सदियों रहा हैं दुश्मन दौर–ए–जहां हमारा"

प्राचीन काल से ही भारतीय सिद्धांत 'आत्मनो मोक्षार्थम् जगत हिताय' अर्थात अपने लिए मोक्ष और जगत के लिए कल्याणारी रहा हैं। अपने से इतर का भी कल्याण चाहना और करना, पूरे विश्व को कुटुंब मानना, हमारे राष्ट्र की गौरव परंपरा हैं;

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवे्त।

यहां के मानव का संकल्प हैं कि उसके कारण किसी को भी लेशमात्र कष्ट न हों। यदि हम मध्यकाल का ही इतिहास देखें तो हम पाएंगे कि जहां एक ओर हिंदू–मुसलमान का संप्रदायी झगड़ा और वहीं दूसरी ओर निर्गुण–सगुण का मसला और शैव शाक्तों आदि में बंटा समाज था। जहां हताशा और निराशा थी तो दक्षिण के आलवर संतो से लेकर उत्तर तक के संतों की आशाओं से भरी निर्भीक वाणियां भी थी और थी कबीराना आत्मविश्लेषणात्मक फटकार भी। इस देश ने सत्ता की दृष्टि से राजाओं और नवाबों में बंटा भौगोलिक परिदृश्य भी भोगा हैं और फिर टुकड़े–टुकड़े में बंटे देश को, अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त पराधीनता की बेड़ियों से राष्ट्र (डॉ फतेह सिंह के अनुसार राष्ट्र का शाब्दिक अर्थ रातियों का संगमस्थल हैं। राति का पर्यायवाची 'देन' राष्ट्रभूमि को प्रदान करते हैं कि नई चेतना और उसकी नई संकल्पना से स्वयं को संपन्न कर,

Edit with WPS Office

जूझते भी देखा हैं और स्वाधीन होते भी देखा हैं । देश के विभाजन के रूप में एक नासूर हमें जरूर मिला हैं तथा यह बार बार जन्म लेने वाली उपर्युक्त आशंका का एक कारण कहा जा सकता हैं। कभी–कभार उभरने वाले अलगाववादी नारे भी आज हमारे लिए एक चुनौती बन गए हैं। लेकिन हम इस सच्चाई को कतई नहीं नकार सकते कि कितनी ही भ्रामक, आताततयी और प्रलोभनकारी खंड–कामी शक्तियों के हमारा भारत एक सुदृढ़ राष्ट्र के तौर पर न केवल विकास के पथ पर अग्रसर हैं बल्कि विश्व के एक समक्ष नेता के रूप में आज संपूर्ण विश्व की अगुआई भी कर रहा हैं। ये सब तभी संभव हैं जब कोई भी राष्ट्र समन्वयशील हो।

भारत की संस्कृति अत्यंत प्राचीन हैं । अतः विचार नहीं अपितु विचारों की अनेक श्रंखलाएं यहां वाटिका के अनेक फूलों की तरह सदा अस्तित्व में रहीं हैं। कितने भी धर्म ऐसे हैं जहां इनका पालन पोषण हुआ और इन सबके पीछे कारण यही हैं कि हमारे राष्ट्र की एक बहुत बड़ी विशेषता, जो उसे अन्य अधिकांश राष्ट्रों से अलग चरित्र प्रदान करती हैं, भाषाई समन्वय या भाषाई अनेकता में एकता हैं। भारत और उसकी भाषाओं तथात्मक परिदृश्य का अवलोकन भी हम करते हैं लेकिन इन सब में एक बात अति महत्त्वपूर्ण है कि बहुभाषी भारत के लिए कभी–कभी भाषा विवाद भी कष्टदायी बन जाता हैं। यानी हैं नहीं परंतु स्वार्थी प्रवृत्तियों के चलते बना दिया जाता हैं। भाषा वास्तव में मां की तरह होती हैं और कोई भी मां अपने सहज रूप में 'संकट' की स्थिति पैदा कर ही नहीं सकती। वह अपनी सहज प्रक्रिया से संघर्ष, टकराहट या ऐसी ही किसी नकारात्मक प्रवृत्ति को प्रश्रय दे ही नहीं सकती। अतः भाषा को लेकर संकट पैदा करने वाले व्यक्ति असहज ही कहे जाएंगे। मनुष्य अपन–अपने संदर्भ में अपनी मां को प्यार करता है जो कि सहज हैं,। लेकिन अपनी मां (भाषा) से सहज प्यार करने के अनुभव से संपन्न मनुष्य दूसरे की भाषा से असहज महसूस करता हैं। इससे यह साबित होता हैं कि भारत में भाषाओं की लड़ाई के पीछे, जो आज भी आंशिक रूप से ही सही एक हकीकत हैं, स्वयं भाषाओं का हाथ नहीं हैं बल्कि कुछ और तत्वों का हाथ हैं तथा वे हमारे लिए विघटनकारी हैं, भारत की लंबी और गहरी समन्वयवादी परंपरा के शत्रु हैं, राष्ट्रद्रोही हैं तथा संकीर्ण हैं। ऐसे तत्वों की पहचान करते कराते रहना आवश्यक हैं। वस्तुतः भारत की अनेक भाषाओं को भाषा परिवार के रूप में भी देखना चाहिए और समन्वयवादी भाव से उन्हें एक

Edit with WPS Office

पारिवारिक व्यवस्था के तहत स्वीकार करना चाहिए। यह सच्चाई बार–बार स्वीकार करनी होगी कि वे भारत की सभी भाषाएं एक दूसरे से ही पनपी हैं। इस भाषा–परिवार में को आघात पहुंचाने वालों को ठीक से समझना चाहिए कि सच्चाई से विमुख होने वाले लोग अक्सर अकेले पड़ जाते हैं। भाषाई समन्वय राष्ट्र लोगों को एक सूत्र में पिरोता हैं तथा मनुष्य की भाषा, जिसमें मनुष्य सोचता है और अभिव्यक्त भी करता हैं, बहुत खतरनाक हथियार हैं; इस संदर्भ में हमेंशा बुजुर्ग लोग कहते थे "पहले तोल, फिर बोल"। हमारे देश के संदर्भ में भाषाई समन्वय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं, यदि हम राष्ट्र को टूटने से बचाना चाहते हैं तो हमें भाषा की स्थिति को सुधारना पड़ेगा तथा यह समय की भी मांग हैं। भारत के प्रसिद्ध भाषाविद प्रो रवींद्रनाथ श्रीवास्तव ने ठीक ही लिखा हैं कि, "भाषा जहां एक ओर राष्ट्रीय एकीकरण का महत्त्वपूर्ण उपादान बन सकती हैं, वहीं दूसरी ओर वह समाज में तनाव, द्वंदव, विद्वेष और विघटन की प्रवृत्ति को भी जन्म दे सकती हैं।' यह दूसरी ओर वाली बात, फिर दोहरा दूं, भाषा की सहज प्रकृति नहीं हैं बल्कि उसे उपयोग में लाने वालों की विकृत मानसिकता का नतीजा हैं। वास्तव में भाषा जातियों, उपजातियों, धर्मों, संप्रदायों आदि से ऊपर होती हैं जैसे कि राष्ट्र होता हैं। भाषा को किसी भी आधार पर नहीं दबाया जा सकता। वह उसे अर्जित करने वाले और उपयोग में लाने वाले के साथ बेवफाई नहीं करती। इसी आधार पर कहा जा सकता हैं कि संदर्भ चाहे विश्व की भाषाओं का हो या भारत की भाषाओं का भाषाई समन्वय ही विश्व के रूप में मनुष्य समाज और भारत के रूप में भी भारतीय समाज का एक सहज सत्य हैं, जिसे नकारने वाले अधिक दूर तक नहीं नकार सकते। समन्वय या एक शब्द जो भाषा की संस्कृति के लिए प्राय उपयोगी होता हैं– सामासिकता, इसका अर्थ विभिन्न भाषाओं या विभिन्न संस्कृतियों का एक दूसरे में विलीन होना या करना नहीं हैं। वास्तव में भाषा संस्कृति की संवाहिका हैं और इसीलिए उसकी पहचान भी कही जाती हैं। लेकिन संस्कृति जैसे अपने रूप को परिवर्तित करते रहने में सक्षम हैं, अपने मूल आधारों पर टिकी रहने के बावजूद भी भाषा अपने स्वरूप को बदलने में सक्षम होती हैं।

Edit with WPS Office

<u>भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक मेल–जोल</u>

"भाषा नहीं है माध्यम केवल संचार का

ये है इतिहास साहित्य का

हैं संस्कृति इससे जुड़ी हुई

विभिन्न विरासत संजोए हुए"

1901 में अंग्रेज़ी शासनकाल के दौरान एक शिक्षा–रिपोर्ट छपी थी, जिसके अनुसार मॉरिशस के भारतीय गिरमिटिए मजदूरों के 6–16 वर्ष के 52,000 बच्चों में से सिर्फ 46,000 बच्चे अनपढ़ और निरक्षर थे। उसी वर्ष युवा गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटते समय संयोग से मॉरिशस पधारे, क्योंकि उनका जहाज 'नौशेरा' खराब हो गया था और मरम्मत के लिए पोर्ट लुई बंदरगाह में लगभग 20 दिनों के लिए लंगर डाला था, यह नवंबर की बात हैं। गांधी के उपरोक्त रिपोर्ट का जायजा लिया था और आस–पास के गांवों का बग्घी द्वारा दौरा भी किया था और पाया कि भारतीय मूल के लोगों की स्थिति बहुत दयनीय हैं। भाषा जिस प्रकार भाव व्यक्त करने का साधन है, उसी प्रकार भाषा का प्रमुख वाहन लिपि हैं। अतः हमारें राष्ट्रमें विगत वर्षों से अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार के साथ–साथ राष्ट्रलिपि देवनागरी का भी प्रचार हो रहा हैं। यदि देश की सभी भाषाओं देवनागरी लिपि में लिखी जाए तो सभी भाषाएं एक–दूसरे के सन्निकट आएंगी। वास्तव में पारस्परिक परिचय के लिए, शुद्ध अंतःकरण की पहचान के लिए तथा देश में एकता की भावना को दृढ़ करने के लिए राष्ट्रभाषा के प्रचार की अपेक्षा देवनागरी पहचान पर अत्यधिक ज़ोर दिया गया। देवनागरी में लिखी जाने वाली हिंदी को भारतीय संविधान ने राजभाषा रूप में मान्यता दी गई है तथा उसको व्यवहार में प्रारंभ करने के लिए 15 वर्ष की काल मर्यादा निर्धारित की हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, मध्य प्रदेश व मध्य राज्यों में अभी–अभी राजभाषा हिंदी काम–काज शुरू हुआ हैं। अन्य शुरू होगा। नवनिर्मित तत्कालीन राज्य आंध्रप्रदेश ने तेलुगू में अपना काम–काज शुरू किया गया। इसी कारणवश राजकीय कारबार की दृष्टि से भाषा और लिपि दोनों ही किस प्रकार योग्य और

Edit with WPS Office

सुगम होंगी, इस विषय पर लोगों का ध्यान केंद्रित हुआ हैं। लखनऊ में आयोजित देवनागरी लिपि सुधार सम्मेलन और उसमें किए गए निर्णय इसी के प्रतीक हैं।

अतः संविधान द्वारा देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी को राष्ट्रभाषा स्वीकृत किए जाने पर हिंदी की देवनागरी को आधुनिक बनाने की दृष्टि से मुद्रण, टंकलेखन, तार, टेलीप्रिंटर आदि के योग्य आवश्यक सुधार के प्रयत्न शुरू हुए। उत्तर प्रदेश सरकार ने आचार्य नरेंद्र देव की अध्यक्षता में सन् 1947 में एक समिति का निर्माण किया। बंबई सरकार ने मराठी–गुजराती लिपि समन्वय की दृष्टि से विचार–विमर्श के लिए एक समिति नियुक्त की। टंकलेखन और लघु–लेखन के लिए कालेकर की अध्यक्षता में केंद्रीय सरकार द्वारा एक समिति नियुक्त हुई। इन सब समितियों की सिफारिशों के गुण–दोष दोनों पर लखनऊ परिषद में विचार हुआ तथा मार्ग दर्शन समिति के द्वारा सुझाए गए संशोधन संबंधी तमाम अधिवेशन स्वीकृत हुए।

पं पंत ने कहा– किसी भी प्रादेशिक भाषा पर देवनागरी लिपि लादना परिषद का प्रयोजन नहीं हैं, परंतु आज जिन स्थानों पर देवनागरी लिपि लादना परिषद का प्रयोजन नहीं हैं किंतु आज जिन स्थानों पर देवनागरी प्रचलित हैं, वहां वह अधिक सुगम हों यही इस सम्मेलन का उद्देश्य हैं। संविधाननुसार देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी राजभाषा हो चुकी हैं। 15 वर्षों में चाहे कुछ भी हो परंतु परस्पर प्रांतों को व केंद्रीय सरकार को देवनागरी लिपि द्वारा हिंदी में व्यवहार करना होगा। प्रादेशिक भाषाओं ने यदि अपनी लिपि कायम रखी तो भी हिंदी और देवनागरी लिपि दोनों का ज्ञान अपरिहार्य हैं। इसीलिए देवनागरी को सर्वसुलभ बनाने की दृष्टि से उसमें सुधार करना इस सम्मेलन का उद्देश्य हैं।

उन्हीं स्रोतों का विश्लेषण करते हुए भारत सरकार दक्षिण एशियाई सांस्कृतिक कार्यक्रम पर बढ़ावा दे रही हैं तथा संस्कृति मंत्रालय लगातार इसी विषय में कार्यरत हैं कि किस तरह से संस्कृति को संरक्षण प्रदान किए जाए। इसका अंदाजा हम पिछले वर्ष नई दिल्ली में आयोजित विश्व का सबसे छोटे 'बिनाले' के आयोजन से लगा सकते हैं। बिनाले एक ऐसा प्रोग्राम हैं जिसमें विश्व स्तरीय संस्कृति एवं कला के मॉडल की प्रदर्शनी लगाई जाती हैं तथा विश्व का सबसे पहला बिनाले वेनिस में हुआ था।

Edit with WPS Office

प्रत्येक भाषा की कुछ न कुछ संस्कृति होती हैं और संस्कृति से ही संस्कार और हमारे गुण बनते हैं। इसीलिए हमें यदि संस्कारों को अच्छा करना हैं तो सर्वप्रथम हमें अपनी भाषा को अच्छे से सुधारना होगा, तभी हम इस विषय पर उत्तम कार्य कर पाएंगे। उदहारणार्थः—

प्रत्येक संस्कृति की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं और उन विशेषताओं के अनुरूप ही उस संस्कृति की भाषा में कुछ विशिष्ट शब्दावली एवं अभिव्यक्तियाँ भी होती हैं। इनमें निहित अर्थ को समझना अक्सर हमारे लिए प्रायः कठिन कार्य होता है। थोड़ी—सी भी असावधानी होते ही अर्थ—विशेष का भाव बदल जाता हैं। उदाहरण के लिएः— अंग्रेजी—भाषी एवं हिंदी—भाषी समाज में अभिवादन—व्यवस्था की अपनी विशिष्टता है। अंग्रेजी में इसका प्रयोग समय के संदर्भ में किया जाता है, किंतु हिंदी में सामाजिक संस्कारों एवं स्तर—भेद के संदर्भ में होता है। अंग्रजी में 'Good morning', 'Good evening', 'Good after-noon', 'Good night', 'Bye-Bye' इत्यादि का प्रयोग किए बिना सामाजिक स्तर—भेद तथा संस्कार—भेद के किया जाता है, किंतु हिंदी में ऐसा नहीं है। अपनों से बड़ों के लिए 'प्रणाम' या 'पाँव लागूँ', अपनों के बराबर वालों के लिए 'नमस्कार', 'नमस्ते', 'राम—राम', 'जय राधे' और अपनों से छोटों के लिए 'चिरंजीव भव', 'आयुष्मान भव', 'जीते रहो', जैसी अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है जिनमें प्रातः दोपहर या सायं जैसा कोई समय सूचक भाव नहीं रहता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक भाषा और उसकी सामाजिक—सांस्कृतिक अभिवादन—परंपराओं के अनुसार किसी भी संदेश को विशिष्टता प्रदान करती हैं जिसका निर्वाह अनुवाद में किया जाना चाहिए। इसी संदर्भ में अनुवादक को ऐसी अभिव्यक्तियों का भी अर्थग्रहण करना पड़ता है जो अलग—अलग देशों मे सामाजिक—भौगोलिक परिस्थितियों के कारण अलग—अलग अर्थ की सूचक होती हैं, जैसे ष्व्तंदहमष को भारत में 'संतरा' कहते हैं किंतु अमेरीका में इसे 'मुसम्मी' (नारंगी) कहा जाता है। वहाँ 'संतरा' को 'मंदारिन' कहते हैं। भारत में 'चप्पल' और 'सैंडिल' के भिन्न अर्थ हैं जबकि अमेरीका में दोनों को ही 'सैंडिल' कहा जाता है। इंग्लैण्ड और अमेरिका की अंग्रेजी में भी अर्थ के स्तर पर अनेक अंतर हैं, जैसे इंग्लैण्ड और भारत की अंग्रेजी में 'बुशर्ट', 'होस्टल', 'फ्लैट', 'बाथरूम', 'अटैची', 'कर्ड', 'ट्रेन', 'लिफ्ट', 'पेट्रोल', आदि शब्द प्रचलित हैं, किंतु अमेरीका की अंग्रेजी में इन्हें क्रमशः 'शर्ट', 'डॉम', 'अपार्टमैंट', 'रेस्टरूम', 'सूटकेस', 'योगर्ट', 'लोकोमोटिव', 'एलिवेटर/एसकेलेटर',

'गैसोलिन' कहा जाता है।

समान शब्दावली में अर्थ की सूक्ष्म भिन्नता होने के कारण कभी—कभी अनुवादक गलत अर्थ

Edit with WPS Office

निर्धारण कर बैठता है। हिंदी में संस्कृत के अनेक शब्द प्रचलित हैं और इनमें एक ही शब्द के लिए तत्सम और तद्‌भव शब्द भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होते हैं, जैसे 'चूर्ण' (तत्सम) का अर्थ है 'कोई भी चूर्ण' किन्तु 'चून' (तद्‌भव) का अर्थ है 'आटा'। इसी प्रकार 'दंड' (तत्सम) और 'डंडा' (तदभव), 'संबंधी' (तत्सम) और 'समधी' (तद्‌भव), 'पाद' (तत्सम) और 'पाँव' (तद्‌भव) आदि देखे जा सकते हैं। शब्दों की इस अर्थ–भिन्नता के कारण अनुवादक के द्वारा विश्लेषण करके मूलपाठ में विद्यमान ऐसे शब्दों का सही अर्थग्रहण किया जाना चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है। मूलपाठ के पूर्ण अर्थबोध के लिए केवल वाक्य का विश्लेषण ही पर्याप्त नहीं है। विश्लेषण के साथ–साथ तर्क और बुद्धि के स्तर पर भी अर्थ–संयोजन करना पड़ता है। प्रत्येक वाक्य से जो अर्थ निकलता है वह संदर्भपरक और तर्कपूर्ण भी होता है। भाषा की वाक्य–संरचना दो या अधिक अर्थों को एक ही अभिव्यक्ति द्वारा व्यक्त करती है और कहीं दो–तीन अभिव्यक्तियों द्वारा एक ही अर्थ व्यक्त करती है। इसलिए विश्लेषण करते समय भाषा में कुछ न कुछ अनेकार्थी, पर्यायवाची, संदिग्धार्थ संरचनाएँ उपलब्ध हो जाती हैं जिनका विशिष्ट अर्थ संदर्भ प्रसंग से ही स्पष्ट हो सकता है।

वाक्यों में क्रमशः 'चाँद', 'मनभर' और 'चसंदजमक' संदिग्ध अर्थों के सूचक हैं। 'चाँद'– (1) चंद्रमा और (2) गंजापन; मनभर– (1) चालीस सेर के बराबर वजन होना और (2) जी भरकर खाना; और 'चसंदजमक'– (1) पौधा लगाना और (2) (पाँव) रखना। अतः अर्थग्रहण/बोधन के लिए संदर्भ का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए क्योंकि यह विभिन्न प्रकार की भाषिक संरचनाओं के सही अर्थ को ग्रहण करने में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त अनुवाद–प्रक्रिया में दो भाषाओं की शैलीगत भिन्नता का कारण उनकी रूप–रचना और वाक्य–रचना की भिन्नता होती है। इस भिन्नता के कारण ही अर्थ–भिन्नता सामने आती है। अनुवाद प्रक्रिया के दौरान अनुवादक के लिए जहाँ प्राथमिक स्तर पर रचना से संबंधित स्रोत भाषा को कथ्य और व्यंजना की दृष्टि से गहराई से समझना होता है, वहीं संप्रेषण की दृष्टि से व्याकरण की सूक्ष्मताओं का भी गहन विश्लेषण करना जरूरी होता है। भाषिक संरचना को लक्ष्यभाषा में संप्रेषित करने के लिए अनुवादक को भाषा–विशेष के भीतरी विधान पर नियंत्राण

Edit with WPS Office

रखते हुए अनुवाद कार्य करना होता है। समस्त संप्रेषण–क्रियाएँ जितनी अर्थ और विचार स्तर से संबद्ध होती हैं, उतनी ही भाषा और उसके अभिव्यंजना–पक्ष से भी। अतः मूलपाठ के अर्थग्रहण/बोधन के लिए व्याकरण के स्तर पर अनेक भाषिक अभिव्यक्तियों/संरचनाओं का विश्लेषण करना आवश्यक होता है। इनमें से कुछ संरचनाओं की प्रक्रियात्मक दृष्टि से चर्चा यहाँ की जा रही है :

भाषा प्रयोग के अतिरिक्त विधापरक उपादानों के स्तर पर भी अनुवादक को पुनर्गठन करना पड़ता है। विधा का तात्पर्य पाठ के संरचनात्मक रूप से है; जैसे–कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता, निबंध। इन विधाओं के बाह्य रूप के साथ–साथ उनकी आभ्यंतर प्रकृति को भी ध्यान में रखते हुए ही पुनर्गठन किया जाता है। नाटक का अनुवाद करते समय उसके बाहरी रूप संवाद–विधान और आभ्यंतरिक रूप, नाटकीयता/रंगमंचनीयता दोनों का ही ध्यान रखना होता है। इसी प्रकार कविता का अनुवाद करते समय उसके बाह्य रूप; छंद–विधान और आभ्यंतरिक रूप काव्यत्मकता दोनों का ही ध्यान रखना होता है। इस प्रक्रिया में अनुवाद विधा के बाहरी रूप को तो बदल सकता है किंतु उसके आभ्यंतरिक रूप को नहीं। कहने का आशय यह है कि यदि मूलपाठ कविता है तो उसका अनूदित पाठ गद्यानुवाद के रूप में दिया जा सकता है किंतु अनूदित पाठ 'सहपाठ' है तो उसकी काव्यात्मकता को किसी भी कीमत पर नहीं छोड़ा जा सकता। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि पुनर्गठन के सोपान पर अनुवादक को अनूदित पाठ की संप्रेषणीयता पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक होता है। कुल मिलाकर आशय यह है कि अनुवाद कार्य एक अनुप्रयुक्त भाषिक प्रक्रिया है, इसलिए उसका एक पक्ष लक्ष्यभाषा के पाठकों से संबंधित होता है जिनके लिए वह अनुवाद कार्य किया जाता है। इस दृष्टि से यह अति आवश्यक है कि अर्थ–संप्रेषण की प्रक्रिया में अनूदित पाठ स्पष्ट, सहज, बोधगम्य तथा लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुरूप होना चाहिए। यह कार्य निश्चित रूप से किसी भी अनुवादक के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है क्योंकि वह पाठ का मूलरचयिता नहीं है और उसके सामने 'प्रारूप' के रूप में पहले से ही एक पाठ होता है जिसके समानांतर लक्ष्यभाषा में उसे एक 'सहपाठ' का निर्माण करना पड़ता है। मूलपाठ के संदेश और फिर उसकी अभिव्यक्ति से संबंधित शैलीगत गठन के दबाव के साथ उसको अनूदित पाठ का निर्माण करना पड़ता है।

Edit with WPS Office

इसके अतिरिक्त उसे अनूदित पाठ को अपने देश और काल के अनुरूप संप्रेषित करना होता है ताकि वह पाठक वर्ग के लिए सुबोध, सहज एवं स्पष्ट बन सके।

भाषा : साझा समन्वय

आज तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी के इस युग में हम धीरे–धीरे सभी भाषाओं से परिचित हो रहे हैं तथा इन सबमें महत्त्वपूर्ण भूमिका आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एवं चैट जीपीटी निभा रहे हैं । इसे हम निम्न उदहारण से समझ सकते हैं।

Good Morning (English)

सुप्रभात (हिंदी)

नमस्कार (हिंदी व संस्कृत)

नमस्ते (संस्कृत)

वण्णक्कम

ऐसे ही हम कृत्रिम बुद्धिमत्ता के माध्यम से हम अनेक भाषाओं के समानार्थी शब्दों के बारें में बड़ी आसानी से जान सकते हैं। आज आर्टिफिशियल इंटेलिजेंश इसमें बढ़–चढ़कर भूमिका निभा रहा हैं । आज एआई के माध्यम से हमें कुछ ही क्षण में बड़े विश्लेषणात्मक ढंग से जानकारी मिल जाती हैं तथा इससे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के सॉफ्टवेयर में भी समयानुसार बदलाव किए जाते हैं। भाषा के यदि विश्लेष्णात्मक रूप में देखें तो हम आज भी अपनी संस्कृति, संस्कार और भाषा की रक्षा करने में पूर्ण रूपेण असमर्थ हैं। आज हमारे पास भारतीय संविधान के भाग 5,7 तथा तमाम गृह मंत्रालय के आदेश होते हुए भी हम अपनी राज भाषा हिंदी को वो सम्मान नहीं दे पा रहे हैं जो किसी राष्ट्र की राजभाषा को मिलता हैं। यदि हम विश्व को देखें तो हर देश में सिर्फ उस राष्ट्र की राजभाषा पर ही जोर दिया जाता हैं तथा अंग्रेजी मात्र वैश्विक स्तर पर संचार का साधन होता हैं । लेकिन हमारे देश की शिक्षा प्रणाली में पूरा जोर अंग्रेजी पर दिया जाता हैं तथा वहां कि क्षेत्रीय भाषा और राजभाषा पर लेस मात्र जोर दिया

Edit with WPS Office

जाता हैं। हमारे विद्यार्थी अंग्रेजों से अच्छी अंग्रेजी बोलते हैं परंतु अपनी ही भाषा का ठीक से उच्चारण न कर पाना यह सिद्ध करता हैं कि जो हमने संवैधानिक प्रावधान किए हैं तथा जो हमारी शिक्षा प्रणाली हैं वह हमारी राजभाषा को सम्मान देने में पूर्णरूपेण असमर्थ हैं।

हमारे सभी विभाग और मंत्रालय बड़े धूमधाम से हिंदी दिवस की तैयारी करते हैं, कार्यशालाएं आयोजित करते हैं, प्रतियोगिता आयोजित की जाती हैं; परंतु कटुसत्य तो यह हैं कि प्रतियोगीयों की नज़र मात्र ईनाम जीतने पर होती हैं और हिंदी अधिकारी तथा अनुवादकों के सिवाय कोई हिंदी पर इतना जोर नहीं देना चाहता। यदि हिंदी अधिकारी अपने उच्चाधिकारियों को दो चार शुद्ध भाषा में शब्द बोल दे (दैनंदनी, प्रतिवेदन, प्रपत्र,) तो उनका सिर चकरा जाता हैं।

यही हमारे राष्ट्र की दुविधा हैं कि हमने हिंदी पर जोर न देकर सिर्फ अंग्रेजी पर जोर दिया हैं। इस विषय में दूसरा उदहारण के तौर पर आप संघ लोक सेवा आयोग के हिंदी भाषी उम्मीदवार के रिजल्ट को देख सकते हैं जिसमें हिंदी भाषी टॉपर की 500 रैंक आई । हमारे दिमाग में सिर्फ एक बात बैठी हुई हैं कि जो लोग अंग्रेजी बोलते हैं वो काफी बुद्धिमान और होशियार होते हैं इसी कारण हम हिंदी को उतना सम्मान नहीं देते हैं । यदि हम संस्कृत की हालत देखे तो वो इससे भी कहीं ज्यादा दयनीय स्थिति में हैं। आज हम किसी भी पब्लिक लाईब्रेरी में संस्कृत की पुस्तक नहीं देख पा रहे हैं और हमारी यह भाषा सिर्फ गुरूकुल तक ही सीमित रह गई हैं । हम यह नहीं समझ पा रहे हैं कि कोई भी भाष सिर्फ भाषा ही नहीं होती अपितु वह एक संस्कृति होती हैं। यदि हम भाषा को एक संस्कृति समझेंगे तो अवश्य ही हम अपनी संस्कृति बचाने में सक्षम होंगे।

भाषिक प्रतीक के ध्वन्यात्मक और लेखिमिक प्रतीकों का माध्यम स्वनिम और स्वनिमिक इकाइयाँ होती हैं। वस्तुतः यहाँ कथ्य का प्रतीकांतरण ही अनुवाद है। माध्यम के आधार पर अनुवाद के तीन प्रकार माने जा सकते हैं : प्रतीक, भाषा और लेखन प्रकार।

(क) **प्रतीक प्रकार** : अनुवाद को व्यापक संदर्भ में प्रतीक सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में भी देखा गया है तथा प्रतीकों के अंतरण के आधार पर अनुवाद के तीन भेद किए जा सकते हैं :

Edit with WPS Office

(अ) अन्वयांतर (अंतःभाषिक अनुवाद): किसी एक भाषा की प्रतीक व्यवस्था को उसी भाषा की अन्य प्रतीक–व्यवस्था द्वारा अंतरण ही अन्वयांतरण अथवा अंतःभाषिक अनुवाद है। इस अनुवाद प्रकार में प्रतीक 1 (स्रोतपाठ संकेत) और प्रतीक 2 (लक्ष्यपाठ संकेत) एक ही भाषा के दो भिन्न व्यवस्थाओं से संबद्ध होते हैं। दूसरे शब्दों में एक ही भाषा के भीतर एक ही बात को अन्य प्रकार से व्यक्त किया जाता है; जैसे– प्रेमचंद ने हिंदी से उर्दू में जो अनुवाद किया वह अन्वयांतर है। उनकी प्रसिद्ध कहानी 'शंतरज के खिलाड़ी' का हिंदी रूप 1924 में 'माधुरी' पत्रिाका में प्रकाशित हुआ था। बाद में उन्होंने स्वयं उसी का अन्वयांतर उर्दू में किया जो 1924 मे 'जमाना' पत्रिाका में 'शतरंज की बाज़ी' नामक शीर्षक से प्रकाशित हुआ। उपर्युक्त दोनों पाठों में न केवल शब्दों के संयोजन और वाक्यों के चयन में अंतर दिखाई देता है वरन् रचना के वातावरण के घनत्व और संवेदना में भी अंतर मिलता है।

(आ) भाषांतर (अंतरभाषिक अनुवाद) : एक भाषा की प्रतीक व्यवस्था द्वारा व्यक्त अर्थ का दूसरी भाषा की प्रतीक व्यवस्था द्वारा अंतरण ही अंतरभाषिक अनुवाद है। वस्तुतः अनुवाद का वास्तविक क्षेत्रा अंतरभाषिक अनुवाद ही है। इस अनुवाद में अनुवादक को द्विभाषिक होना आवश्यक है। उसके लिए

स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा पर अधिकार होना अपेक्षित है; जैसे–प्रेमचंद के 'गोदान' उपन्यास का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद। अनुवाद का यह रूप सबसे ज्यादा प्रचलित है।

इ) **प्रतीकांतर (अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद)** : ऊपर के दोनों अनुवाद प्रकारों में प्रतीक–1 और प्रतीक–2, दोनों ही भाषा पर आधारित है, किंतु इस अनुवाद में प्रतीक 1 की व्यवस्था का आधार तो भाषा होती है लेकिन प्रतीक–2 भाषेतर प्रतीक व्यवस्था की अपेक्षा रखता है। अर्थात् स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा के प्रतीक माध्यम अलग–अलग होते हैं। इसके अनुसार किसी कहानी या उपन्यास का फिल्म या टी.वी के दृश्य बिंबों द्वारा प्रतीकांतरण किया जा सकता है। इस प्रकार के अनुवाद में उदाहरण के रूप में प्रेमचंद के 'गोदान', फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला

Edit with WPS Office

आँचल' और श्रीलाल शुक्ल का 'राग–दरबारी' एवं रामायण, महाभारत इत्यादि का फिल्म रूपांतरण ले सकते हैं। नाटकों का मंचन या कविताओं पर आधारित पेंटिंग्स भी इसी श्रेणी के अनुवादों में आते हैं।

(ख) भाषा प्रकार : भाषा के मौखिक, ध्वन्यात्मक एवं लिखित उपादानों तथा भाषा के पद्यात्मक एवं गद्यात्मक रूपों के आधार पर अनुवाद को जब वर्गीकृत किया जाता है तो भाषा प्रकार के अंतर्गत अनुवाद के दो भेद प्राप्त होते हैं : अ) उपादान सापेक्ष उपादान सापेक्ष उपादान सापेक्ष उपादान सापेक्ष उपादान सापेक्ष : पाठ को जब अनुवाद को आधार बनाया जाता है तो इसमें भाषा के लिखित और मौखिक उपादान अलग–अलग होने के कारण अनुवाद का एक विशेष प्रकार सामने आता है। इसके अंतर्गत अनुवाद और निर्वचन अथवा आशु अनुवाद आते हैं। अनुवाद का उपादन लेखन लेखन लेखन लेखन लेखन होता है और निर्वचन का उपादान ध्वनि ध्वनि ध्वनि ध्वनि ध्वनि है। भाषा के लिखित और उच्चरित रूप एक ही कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए दो स्वतंत्रा और स्वायत्त रूप हैं। अनुवाद लिखित लिखित लिखित लिखित लिखित होता है और निर्वचन/आशु अनुवाद मौखिक मौखिक मौखिक मौखिक मौखिक। निर्वचन/आशु अनुवाद में दुभाषिये को अन्य अनुवादकों की भाँति इतना अवकाश नहीं मिलता कि वह देर तक सोच सके या अपेक्षित कोश आदि को देख सके। उसमें अपेक्षा की जाती है कि वह संदेश को सही रूप में तत्परता से पहुँचा सके। इस प्रकार के निर्वचन/सद्यः अनुवाद (तत्काल अनुवाद) की व्यवस्था भारतीय संसद, संयुक्त राष्ट्रसंघ के अधिवेशनों में, राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय विचार गोष्ठियों, वैश्विक व्यापारिक कंपनियों की बैठकों, खेलों की कमेंट्री और पर्यटकों अथवा आवागमन जैसे मेट्रो रेल आदि में होती हैं। किन्हीं बैठकों में संकेत भाषा ऀ;पहद स्ंदहनंहमद्ध द्वारा भी विशेष निर्वचन/आशु अनुवाद की व्यवस्था होती है। आ) रूप सापेक्ष : आ) रूप सापेक्ष : आ) रूप सापेक्ष : (आ)रूप सापेक्ष : इसके अंतर्गत पद्यानुवाद और गद्यानुवाद के प्रकार आते है। पद्यानुवाद पद्यानुवाद पद्यानुवाद पद्यानुवाद पद्यानुवाद से अभिप्राय पद्य में अनुवाद करना है। इसके भी दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। एक मूल पद्य पाठ का अनुवाद पद्य में किया जाता है और दूसरा मूल गद्य पाठ का पद्य में। प्रथम उदाहरण के लिए 'यदा–यदा हि धर्मस्य' के अनुवाद 'जब–जब होई धरम की हानि' को लिया जा सकता है जबकि दूसरे उदाहरण के रूप

Edit with WPS Office

में आल्हा को लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त पद्य साहित्य के असंख्य अनुवाद, विशेष रूप से श्रीमद्भगवद्गीता के श्लोकों के अनुवाद, जो मूल की लय और भावना को बनाए रखते हैं उन्हें भी उदाहरणों के रूप में यहाँ रखा जा सकता है। उमर खैय्याम की रुबाइओं तथा बहादुर शाह जफर के अनुवाद भी दृष्टव्य है। गद्यानुवाद गद्यानुवाद गद्यानुवाद गद्यानुवाद गद्यानुवाद से अभिप्राय गद्य में अनुवाद करना है। मूल पद्य पाठ का गद्यानुवाद भी इसी के अंतर्गत आता है। मूल गद्य पाठ का किसी दूसरे गद्य रूप में जैसे कि टीका, भाषा अथवा सरलार्थ संक्षेपण इत्यादि भी इसी के अंतर्गत लिया जा सकता है। प्रथम उदाहरण के रूप में कविताओं की व्याख्या तथा दूसरे उदाहरण के अंतर्गत किसी कहानी का नाट्य रूपांतरण लिया जा सकता है। संस्कृत श्लोकों की टीका, अन्वय, व्याख्या इसी अनुवाद के प्रकार हैं।

(ग) : लेखन प्रकार : अनुवाद करते समय कुछ ऐसी स्थितियाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं जब कुछ पाठ हमें मौखिक रूप में उपलब्ध होते हैं, तथा उन पाठों में कुछ ऐसे शब्द भी होते हैं जिनका अनुवाद नहीं किया जा सकता। ऐसे में इन्हें लिपिबद्ध करने की आवश्यकता होती है। अतः इनका जो उच्चारण होता है

उसे ज्यों का त्यों रखने का प्रयास किया जाता है या उसे कुछ परिवर्तन के साथ रखा जाता है। इन्हीं परिस्थितियों के अंतर्गत अनुवाद के दो प्रकार किए जा सकते हैं; लिप्यंकन और लिप्यंतरण :

अ) लिप्यंकन (Transcription) : अनुवाद के इस प्रकार में स्रोतभाषा के शब्द की वर्तनी पर ध्यान न देकर उसके उच्चारण को आधार माना जाता है। लक्ष्यभाषा में इसी उच्चारण के अनुरूप शब्द को लिखा जाता है। इसमें स्रोतभाषा के उच्चारण के अनुसार लक्ष्यभाषा के लिपिचिह्न निर्धारित किए जाते हैं। इसमें अंतरराष्ट्रीय स्वनिक वर्ण (IPA) अथवा किसी अन्य लिपि चिह्न व्यवस्था के आधार पर लिप्यंकन किया जाता है। भाषाविज्ञानी इनडेंजर्ड लैंग्वेजेज (संकटापन्न भाषाओं) के दस्तावेजीकरण (डाक्यूमेंटेशन) में इसी अनुवाद प्रकार का उपयोग करते हैं। यहाँ कुछ ध्वनियों का बर्तुलॉकार उच्चारण हो जाता है तथा कुछ ध्वनियों का लुप्त या शांत रूप भी दिखाई देता है। 'त' ध्वनि भी दीर्घ स्वर में उच्चारित होती है यथा ॅसउंतज : वॉलमाट। अंग्रेजी के ठवउइ (बॉम) शब्द में 'ट' ध्वनि का उच्चारण 'ऑ' के रूप में हो जाता है और 'ब' का लोप हो जाता है। हिंदी से अंग्रेजी में लिप्यंकन करते समय पटना, श्याम, चाँद

Edit with WPS Office

इत्यादि के लिए क्रमशः t, s, ca के साथ विशेष चिह्नों (m, œ, câ) का प्रयोग किया जाता है ताकि उनकी ध्वनि में 'ट', 'श' और 'चाँ' ध्वनियाँ सुनाई दें।

लिप्यंतरण (Transliteration)) : जब मूलपाठ में प्रयुक्त नामों, स्थानों एवं कुछ अभिव्यक्तियों का लक्ष्यभाषा में अनुवाद करना संभव नहीं होता है तब उनके उच्चारण को ध्यान में रखते हुए उनके मूलरूप को यथावत लक्ष्यभाषा में रख दिया जाता है तथा स्रोतभाषा की वर्तनी में प्रयुक्त लिपि चिह्नों के स्थान पर लक्ष्यभाषा में उपलब्ध लिपि चिह्नों से प्रतिस्थापित किया जाता है। रेल विभाग द्वारा रेलवे स्टेशन के नामों, या विभिन्न सरकारी संस्थाओं के नामपट्टों में इस रूप को देखा जा सकता है।

सांस्कृतिक सहयोग

वैदिक साहित्य के अवसान–काल में लौकिक संस्कृत का उपक्रम होने के समय ऐसे दो महान ग्रंथों का उदय हुआ जिन्होंने भारतीय साहित्य तथा जन–जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया । ये दो ग्रंथ थे रामायण और महाभारत; जिनका अनुवाद लगभग सभी भाषाओं में हो चुका हैं तथा इनमें गीता तो ऐसा ग्रंथ हैं जिसे 90 प्रतिशत वैज्ञानिकों ने पढ़ा हैं और अपनी सफलता का श्रेय इसी ग्रंथ को दिया हैं कि जब भी वे कठिन परिस्थितियों में घिरें थे तो इसी गीता नाम की पुस्तक ने उनका मार्ग प्रशस्त किया और उन्हें मंजिल तक पहुंचाया। भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ ए पी जे अब्दुल कलाम ने स्वयं कहा कि," गीता एक अच्छाईयों से भरा हुआ ग्रंथ हैं तथा जब वो वायुसेना की परीक्षा में फैल हुए तो उन्हें किसी ने एक गीता थमा दी और इसी गीता ने उनका मार्ग बदल दिया और वो भारत के राष्ट्रपति बनें तथा जिस वायुसेना में वो स्वयं सेवा देने जा रहे थे। उसी के वायुसेनाध्यक्ष ने उन्हें सैल्यूट किया।"

भाषा हमारें राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोती तो हैं, उसी के साथ–साथ क्षेत्रवाद के आधार पर हो रहे भेदभाव को भी कम करती हैं। यह भावना हम अपने संविधान की आठवीं अनुसूची में भी देखते हैं जिसमें 22 भाषाओं को राजभाषाओं का दर्ज़ा प्राप्त हैं। इसी के पहल पर संस्कृति मंत्रालय ने भी काम करना शुरू कर दिया हैं तथा राष्ट्रीय स्तर के पुस्तकालयों में 22 राजभाषाओं में छपी हुए पुस्तकें और साहित्य उपलब्ध करवानें का कार्य जोरों पर हैं। जिसकी झलक आप केंद्रीय सचिवालय ग्रंथागार और दिल्ली पब्लिक पुस्तकालय तथा अन्य पुस्तकालयों

Edit with WPS Office

में आ सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों के अनुरूप चुनौती बनकर सामने खड़ी हो जाती है। दूसरी स्थिति इसी समस्या का विस्तारित रूप है जिसका समाधान न मिल पाने के कारण अननुवाद्यता की स्थिति उत्पन्न होती है। अनुवाद्यता से अभिप्राय अनूदित हो सकने की स्थिति या संभावना से। वास्तव में अनुवाद समतुल्यता स्थापित हो जाने की वास्तविक और संभाव्य स्थिति अनुवादकता है यहाँ मूल की स्थिति या प्रभाव इतना अधिक होता है कि उसके समतुल्य हमें कुछ मिल ही नहीं पाता। यहाँ हम यह भी कह सकते हैं कि मूल पाठ की विषयवस्तु को तथा उसके भाषिक सौन्दर्य को हम चाहकर भी लक्ष्यपाठ हेतु अपने अनुवाद में बदल नहीं सकते। वस्तुतः यहाँ अनुवाद विषय (पाठ) की भी चुनौतीपूर्ण सीमा होती है केवल अनुवादक की ही नहीं। 'अन–अनुवाद्य' या अननुवाद्यता शब्द अन् और अनुवाद्य के संयोग से बना है; जिसका अर्थ है – जो अनूदित न हो सके। अर्थात स्रोतपाठ और लक्ष्यपाठ में सामाजिक–सांस्कृतिक, भाषिक और पाठ–प्रयुक्तिपरक अभिव्यक्तियों के लिए समानार्थी उपलब्ध न हों। इसके अतिरिक्त अनूदित पाठ का पाठक मूल पाठ की संवेदना संकल्पना और उसकी अर्थवत्ता को ग्रहण कर ही न पाए, ऐसी स्थितियाँ सकल रूप में अननुवाद्यता की स्थिति कहलाती हैं। अतः यह स्पष्ट है कि सीमा एवं अननुवाद्यता लगभग एक ही संकल्पना के दो रूप हैं जिनका अंतर उनकी प्रक्रिया से संबंधित है। अनुवाद विषय पर आधारित होता है। अनुवाद कर्म का प्रयोजन क्षेत्रा विशाल है, यह सार्वभौम है, तथा साहित्य से प्रशासन तथा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रयुक्तियों से मीडिया तक अनेक विषयों एवं रूपों में दिखलाई देता है। विषय के अनुरूप ही अनुवाद के समक्ष सीमाएँ एवं चुनौतियाँ आती हैं। अतः अनुवाद की सीमाओं की चर्चा हम उदाहरण सहित विविध विषयों के अनुरूप अलग–अलग करेंगे। अनुवाद के विभिन्न क्षेत्राों और उसके प्रकारों के आधार पर सीमाओं और अननुवाद्यता की स्थितियों को देखा–परखा जा सकता है। अधिकतर अनुवाद विचारकों ने अननुवाद्यता को विषयवस्तु की विधा, यथा; भाषिक स्तर, साहित्यिक स्तर, सांस्कृतिक–सामाजिक स्तर, भाषा की प्रकृति स्तर तथा पाठ–प्रकृति के स्तर पर देखा है। प आसानी से देख सकतें हैं।

इसके अलावा भारतीय उच्चतम न्यायालय भी इस ओर अपना कदम बढ़ाता हुआ दिख

Edit with WPS Office

रहा हैं, जिसमें उसके सारे निर्णय अंग्रेजी भाषा के अलावा हिंदी तथा अन्य भाषाओं में पढ़े जा सकतें हैं। आज इस क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता बड़े स्तर पर अपनी भूमिका अदा कर रहा हैं। जिसमें आप आसानी से किसी भाषा को अन्य भाषा में पढ़ने के लिए इनकी मदद ले सकतें हैं।

आज वैश्विक स्तर पर वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणा का विकास हो रहा हैं तथा इससे समूचा विश्व प्रेम के एक सूत्र में बंध रहा हैं। आज धड़ल्ले से वैश्विक ग्रंथों का हिंदी अनुवाद हो रहा हैं और हिंदी तथा संस्कृत के 90 प्रतिशत ग्रंथों का पहले ही अंग्रेजी भाषा में अनुवाद हो चुका हैं। भाषा कहीं न कहीं समूचे राष्ट्र को एक सूत्र में पिरो रही हैं जिससे कि पूरा विश्व साहित्य रूपी अद्भुत धरोहर की रक्षा कर सके और उससे अपनी आगे आने वाली पीढ़ियों से मिसाल कायम कर सके।

इसमें एक कथन और महत्त्वपूर्ण हैं जब पिछले वर्ष सोमालिया में भारतीय सेना के जवान जीवनरक्षा रसद लेकर पहुंचे तो वहां के बच्चों ने भारतीय सेना के कर्नल का हाथ चूमते हुए कहा कि," सर आज इस विपदा में भारत और उसकी सेना ने हमारी मदद की हैं। हम ये ऐहसान कभी नहीं भूल सकते और जिस तरह आपने हमारी मदद की हैं। उसी तरह हमारा मुल्क भी आपके साथ वैसे ही खड़ा रहेगा।" तो इन उद्धरणों से ये पता चलता हैं कि संस्कृति हमेशा जीवित रहती हैं यह एक जीवंत आत्मा हैं जो कई युगों तक रहती हैं।

भाषाओं के माध्यम से मानवता धर्म की रक्षा

भाषा मनुष्य को एक ईश्वरीय देन हैं। यदि भाषा का ज्ञान मनुष्य को न हुआ होता तो वह उतने ही ज्ञान की सीमा के अंदर सिमट कर रह जाता, जितने में इतर जीवधारी हैं। भाषा के कारण ही सभ्यता, संस्कृति, साहित्य एवं अन्य ज्ञान और विज्ञान का प्रादुर्भाव संभव हो सका हैं। भाषा के माध्यम से ही विश्व में सभ्यता, संस्कृति, साहित्य एवं अन्य ज्ञान–विज्ञान का प्रादुर्भाव संभव हो सका हैं। भाषा के माध्यम से ही मनुष्य ने एक–दूसरे से मेल–जोल किया, वैचारिक आदान–प्रदान करते हुए अपने ज्ञान को विस्तार दिया। वैश्विक स्तर पर तो आधुनिक विज्ञान के

Edit with WPS Office

विकास एवं सूचना प्रौद्योगिकी की त्वरित प्रगति से न केवल शक्ति और सत्ता के प्रतीकों में युगांतकारी परिवर्तन हुए हैं। जिसका मूल्य लक्ष्य निर्धारण, गंभीर संकट के प्रति नीति–निर्धारकों, भाषा–विशेषज्ञों, प्रयोगकर्ताओं, विभिन्न भाषा–भाषी समुदायों एवं समन्वयों का स्रोत हैं। आज विश्व में 6000 भाषाएं बोली जाती हैं और इनमें से अधिकतर भाषाएं कई बोलियों में हैं। फिर भी ऐसी बहुत–सी भाषाएं जो लुप्त हो गई हैं, उनके बारें में हमें कोई विस्तृत जानकारी प्राप्त नहीं होती हैं। ज्यादा से ज्यादा इन भाषाएं में लिखित खंडमय सामग्री ही मिलती हैं। ऐतिहासिक अभिलेखों से केवल इन भाषाओं के नामों की सूचना ही मिलती हैं। इनके अतिरिक्त अन्य बहुत–सी भाषाएं भी हैं, जो समाप्त हो चुकी हैं और उनके बारे में कोइ जानकारी प्राप्त ही नहीं होती हैं।

भाषा से ही पता चलता हैं कि अमुक समुदाय ने अपनी भाषा शक्ति द्वारा विश्व के साथ अपनी समस्याओं को कैसे सुलझाया होगा तथा किस प्रकार दुनिया के बारें में अपनी सोच, समझ एवं दर्शन प्रणाली का निरूपण किया होगा अर्थात में प्रत्येक भाषा लोगों की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की अभिव्यक्ति का साधन हैं। यदि इसे प्राचीनकाल से समझे तो दर्शनशास्त्र या मीमांसा शास्त्र से समझ सकते हैं जो कि प्राचीनकाल में मानव रक्षा का शास्त्र होता था। धर्मजिज्ञासा से प्रारंभ हुआ ये मीमासां दर्शन का अत्यन्त प्रासंगिक एवं विवेचनीय विषय है वेदापौरुषेयत्व। यह सिद्धान्त सभी दर्शनों में मीमांसा दर्शन को शीर्ष स्थान प्राप्त कराता है। विधि वेद के पंचविध अंशों में से प्रथम एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। यह वेदांश अज्ञात अर्थ का बोध कराने हेतु प्रवृत्त होता है – 'अज्ञातार्थज्ञापकेवेदभागोविधिः'। यह वेदांश अन्य अंशों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह सभी वेदों के मूल में स्थित है इसलिए इसकी प्रधानता और बढ़ जाती है। इस प्रकार अर्थसंग्रह के विवेचित प्रमुख विषयों के रूप में धर्मादि का विवेचन मीमांसा में प्रवेश करने वाले जिज्ञासुओं के लिए प्रधानतया पठनीय है।

आज हम सब लोग यह देख रहें हैं कि संपूर्ण विश्व एक ही आवाज में एकजुट होकर आतंकवाद के विरुद्ध और विशेषकर इस्लामिक आतंकवाद के विरोध में आवाज उठा रहा हैं जो कि लगभग 3 वर्षों से ऐसे आतंकवाद को उजागर करने में लगे हुए हैं। यह सब भाषा के द्वारा ही मानवधर्म की रक्षा करने का ही एक प्रयास हैं। 2014 से संघ लोक सेवा आयोग ने सभी

Edit with WPS Office

आवेदकों के लिए दर्शनशास्त्र के लिए एक मिला जुला विषय शुरू किया हैं, जिसे हम सब ऐथिक्स यानि जीएस परीक्षा 4 के नाम से भी जानते हैं, इसका मूल उद्देश्य हैं भाषा के माध्यम से हम विभिन्न दार्शनिकों के बारें में जाने और उनकी विचारधारा को पहचाने कि उन्होंने जब वो परिभाषाएं दी होंगी उस दौरान हमारा समय कैसा रहा होगा और आज हमारी परिस्थिति किस तरह की हैं। क्या आज हमारे लिए उन सब नीतियों को कार्यान्वित करना लाभाकारी सिद्ध होगा या नहीं।

यदि नहीं होगा तो आज हमारे पास कौन से विकल्प हैं। हम इन सब चुनौतियों से किस प्रकार से निपट सकते है यदि हम निपटने में असमर्थ हैं तो आज के दौर में इन सब समस्याओं का हल क्या हैं इन्हीं सभी समस्याओं से निपटने में आज भाषा कहीं न कहीं अति आवश्यक भूमिका निभा रहीं हैं।

"हमारे देश में अपराध इसलिए बढ़ रहें हैं कि हम युवाओं को शिक्षा तो दे रहें हैं, लेकिन उनके पाठ्यक्रम में हमने नैतिक शिक्षा नहीं जोड़ा और इसी नैतिकता की कमी के कारण हम ये देख पा रहें हैं कि जिन युवाओं को देश की प्रगति में भागीदार होना चाहिए वो आज आपराधिक गतिविधियों में लिप्त हैं। अध्यापक और प्रत्येक माता–पिता का ये दायित्व हैं कि वो अपने बच्चों में नैतिक मूल्यों को ढालें तभी ये राष्ट्र अपराध मुक्त हो सकेगा।"

–डॉ प्रणब मुखर्जी

Edit with WPS Office

सामाजिक उपादेयता

वास्तव में तो मनुष्य एक सामाजिक प्राणी हैं, उसने जो लिया समाज से लिया और दे भी समाज को रहा हैं। अक्सर हम लोग यह सुनते हैं कि संस्कृति व धरोहर को बचाने का प्रयास सरकार को करना चाहिए इस पर कड़े कदम उठाने चाहिए लेकिन हम इस बात को तो भूल ही जाते हैं कि हमें सर्वप्रथम अपनी भाषा की गरिमा के महत्त्व को समझना पड़ेगाा और यह हमारे लिए जरूरी नहीं बल्कि आज की आवश्यकता हैं। इसलिए भाषा के विकास का अध्ययन संस्कृति के विकास के आलोक में होना चाहिए। भाषा चिंतन की अनेक समस्याओं की तरह भाषा की उत्पत्ति भी भाषा वैज्ञानिकों के लिए एक गंभीर चुनौती का विषय हैं। अधिकांश विद्वान प्रकृति और समाज के अन्य तत्वों की तरह भाषा को भी विकास मान मानते हैं किंतु उनका तो एक प्रबल मत हैं कि मनुष्य में बुद्धि–तत्व विशेष था, इसीलिए पशुओं व जीवधारियों में सिर्फ मनुष्य ही भाषा का निर्माण कर पाया हैं।

भाषा प्रांतों को जोड़ने का माध्यम हैं और हमारी संस्कृति का प्रतीक हैं। इतनी विविधताओं वाले देश के एकीकरण का सूत्र अनिवार्य हैं। यहा साझा संस्कार , सांझी संस्कृति तथा सांझी भाषा तीनों समन्वय का काम करती हैं। इसी दौर में हम हिंदी को बढावा देने के लिए सबसे पहले तो समाज में और विशेषकर युवाओं को हिंदी सीखने के लिए प्रेरित करना है, मजबूर नहीं। क्योंकि 2017 युवाओं का भारत हैं जिसमें 60 प्रतिशत से ज्यादा संख्या युवा पीढ़ी की हैं। अतः उन्हें मजबूर करने से भाषा को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा वरन् विवाद पैदा हो जाएगा। दक्षिण भारत में पुरानी पीढी के लोगों को हिंदी आती हैं। फिर कुछ अंतराल बाद आज की नई पीढ़ी हिंदी सीखने में प्रयत्नशील हैं। इससे स्पष्ट होता हैं कि राजभाषा आयोग एव हिंदी निदेशालय द्वारा उठाए गए कदम कहीं न कहीं कारगर साबित हो रहे हैं।

Edit with WPS Office

भाषा स्वरूप और दक्षता

हिन्दी शब्द का सम्बन्ध संस्कृत शब्द 'सिन्धु' से माना जाता है। 'सिन्धु सिन्धु नदी को कहते थे और उसी आधार पर उसके आस-पास की भूमि को सिन्धु कहने लगे। यह सिन्धु शब्द ईरानी में जाकर 'हिन्दू', हिन्दी और फिर 'हिन्द' हो गया। बाद में ईरानी धीरे-धीरे भारत के अधिक भागों से परिचित होते गए और इस शब्द के अर्थ में विस्तार होता गया तथा हिन्द शब्द पूरे भारत का वाचक हो गया। इसी में ईरानी का ईक प्रत्यय लगने से (हिन्द+ईक) 'हिन्दीक' बना जिसका अर्थ है 'हिन्द का'। यूनानी शब्द 'इण्डिका' या लैटिन 'इण्डेया' या अंग्रेजी शब्द 'इण्डिया' आदि इस 'हिन्दीक' के ही दूसरे रूप हैं। हिन्दी भाषा के लिए इस शब्द का प्राचीनतम प्रयोग शरफ़ुद्दीन यज्दी' के 'जफ़रनामा'(1424) में मिलता है। प्रमुख उर्दू लेखकों ने 19वीं सदी की सूचना तक अपनी भाषा को हिंदी या हिंदवी के रूप में संदर्भित करते रहे

अपभ्रंश की समाप्ति और आधुनिक भारतीय भाषाओं के जन्मकाल के समय को संक्रान्तिकाल कहा जा सकता है। हिन्दी का स्वरूप शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित हुआ है। १००० ई० के आसपास इसकी स्वतन्त्र सत्ता का परिचय मिलने लगा था, जब अपभ्रंश भाषाएँ साहित्यिक सन्दर्भों में प्रयोग में आ रही थीं। यही भाषाएँ बाद में विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप में अभिहित हुईं। अपभ्रंश का जो भी कथ्य रूप था - वही आधुनिक बोलियों में विकसित हुआ।

अपभ्रंश के सम्बन्ध में 'देशी' शब्द की भी बहुधा चर्चा की जाती है। वास्तव में 'देशी' से देशी शब्द एवं देशी भाषा दोनों का बोध होता है। भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में उन शब्दों को 'देशी' कहा है जो संस्कृत के तत्सम एवं सद्भव रूपों से भिन्न हैं। ये 'देशी' शब्द जनभाषा के प्रचलित शब्द थे, जो स्वभावतः अप्रभंश में भी चले आए थे। जनभाषा व्याकरण के नियमों का अनुसरण नहीं करती, परन्तु व्याकरण को जनभाषा की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना पड़ता है। प्राकृत-व्याकरणों ने संस्कृत के ढाँचे पर

Edit with WPS Office

व्याकरण लिखे और संस्कृत को ही प्राकृत आदि की प्रकृति माना। अतः जो शब्द उनके नियमों की पकड़ में न आ सके, उनको देशी संज्ञा दी गयी।

अंग्रेजी काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय हिन्दी के विकास में एक नयी चेतना आयी। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के समय महात्मा गाँधी सहित अनेक नेताओं ने भारतीय एकता के लिये हिन्दी के विकास का समर्थन किया। काशी नागरी प्रचारिणी सभा और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के प्रयासों से हिन्दी को एक नयी ऊँचाई मिली। भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात संविधान निर्माताओं ने हिन्दी को भारत की राजभाषा स्वीकार किया।

हिन्दी और उर्दू दोनों को मिलाकर हिन्दुस्तानी भाषा कहा जाता है। हिन्दुस्तानी मानकीकृत हिन्दी और मानकीकृत उर्दू के बोलचाल की भाषा है। इसमें शुद्ध संस्कृत और शुद्ध फ़ारसी-अरबी दोनों के शब्द कम होते हैं और तद्भव शब्द अधिक। उच्च हिन्दी भारतीय संघ की राजभाषा है (

भाषा संरचना के स्तर लक्ष्यभाषा के सब सममूल्य स्तरों से प्रतिस्थापित हो जाएँ तो उसे 'समग्र' अनुवाद कहेंगे। परंतु सरंचनात्मक भाषाविज्ञान की मान्यताओं के अनुसार दो भाषाओं की समस्त व्यवस्थाओं में सममूल्यता नहीं होती क्योंकि प्रत्येक भाषा स्वनिष्ठ होती है और उनकी इकाइयों तथा श्रेणियों की सार्थकता प्रत्येक भाषा के भीतर पारस्पारिक संबंधों पर आधारित होती है। एक भाषा की पाठ्यसामग्री दूसरी भाषा में स्थानांतरित तो हो सकती है परंतु दोनों भाषाओं में सरंचना की समग्रता के स्तर पर सममूल्यता नहीं होती। इस कोटि का निर्धारण केवल सैद्धांतिक आवश्यकता की दृष्टि से किया गया है। यदि मूल पाठ की भाषा–संरचना के किसी एक स्तर के स्थान पर लक्ष्यभाषा पाठ की भाषा–संरचना के संवादी स्तर को स्थापित किया जा सके तो उसे 'परिसीमित' अनुवाद कहेंगे जिसका विवेचन कृष्ण कुमार गोस्वामी ने भी किया

Edit with WPS Office

है। परिसीमित अनुवाद के चार भेद होते हैं। जैसे – 1) स्वनिमिक, 2) लेखिमीय, 3) व्याकरणिक, और 4) शब्दकोशीय आदि।

मूल भाषा की स्वनिम व्यवस्था के स्थान पर लक्ष्यभाषा की स्वनिम व्यवस्था आ जाती है। परंतु सामान्यतया व्याकरण तथा शब्दकोश अप्रभावित रहते हैं। इसका आधार है– मूलभाषा तथा लक्ष्यभाषा के समान स्वनिक अभिलक्षणों– घोषत्व, प्राणत्व आदि स्वनिमिक इकाइयाँ हैं। मूलभाषा की उन स्वनिमिक इकाइयों के स्थान पर लक्ष्यभाषा की वे स्वनिमिक इकाइयाँ आ जाती हैं जिनमें स्वनिक अभिलक्षणों की अधिकतम समानता मिलती है; जैसे अंग्रेजी 'फ़' के स्थान पर मराठी 'फ़' (जैसे अंग्रेजी : फ़ार्मेसी– मराठीः फार्मेसी) उर्दू के ज़ के स्थान पर हिंदी में ज का प्रयोग भी ऐसा ही है। स्वनिमिक अनुवाद का स्वेच्छा से व्यवहार करने वालों में उल्लेखनीय हैं अभिनेता और विदूषक लोग। जब वे कला प्रदर्शन के दौरान विदेशी भाषा या बोली की ध्वनियों का सायास अनुकरण (उच्चारण) करते हैं तो वे लक्ष्यभाषा की उच्चारण व्यवस्था को स्वभाषा में ले आते हैं– स्वभाषा में उसका अनुवाद (ट्रांसफर–संक्रमण) कर देते हैं। यही स्थिति विदेशी भाषा सीखने वाले छात्रों के अशुद्ध उच्चारणों में होती है जो वे अनायास तथा असतर्कतापूर्वक करते हैं। दूसरी स्थिति को भाषा–अधिगम के प्रसंग में स्वनिमिक व्याघात कहा जाता है– मातृभाषा की व्यवस्था को अन्य भाषा (लक्ष्यभाषा) की स्वनिम व्यवस्था पर आरोपित किया जाता है। परंतु अनुवाद की शब्दावली में इसे हम अन्य भाषा (लक्ष्यभाषा) से मातृभाषा में स्वनिमिक अनुवाद कहेंगे। स्वनिमिक अनुवाद के अनेक प्रसंगों में व्याकरण तथा शब्दकोश अप्रभावित रहते हैं। परंतु कुछ ऐसी परिस्थितियाँ भी हैं जिनमें लक्ष्यभाषा के ऐसे शब्दों का चयन किया जाता है जिनकी स्वनिक संरचना में मूलभाषा के शब्दों की स्वनिक संरचना से अधिकतम निकटता होती है। ऐसी परिस्थितियाँ है फिल्म डबिंग तथा कविता का अनुवाद। इन स्वनिमिक विशेषताओं को स्वनिमिक अनुवाद के नाम से भी अभिव्यक्ति किया जा सकता है।

भाषा प्रयोग में चार क्रियाएं (दक्षताएं) सम्मिलित है :–

भाषा को बोलना, सुनना, पढ़ना एवं लिखना। यदि इनका विश्लेषण किया जाये तो निम्न उद्देश्यों

Edit with WPS Office

की प्राप्ति भाषा शिक्षण के माध्यम से होनी चाहिए –

- अन्य व्यक्तियों के कथन, भाषण आदि को सुनकर उसका अर्थ, आशय तथा भाव समझना।
- अपने विचारों , भावों, उद्देश्यों को भाषा में बोलकर दूसरों के सामने प्रकट करना।
- अन्य व्यक्तियों द्वारा लिखित भाषा को समझना।
- अपने भावों, विचारों को लिपिबद्ध रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता पैदा करना।

इन्हीं दक्षताओं के विकास हेतु सुनने, बोलने, पढ़ने व लिखने के कौशलों का अभ्यास कराया जाता है जिससे छात्र इन क्रियाओं पर अधिकार प्राप्त कर सकें। बच्चों को बचपन में जो छोटी–छोटी कहानियाँ, बालगीत सुनाये जाते है वह वास्तव में बच्चे को सुनने के कौशल के विकास एवं दक्षता के लिए ही सुनाई जाती थी।

बोलने की शक्ति का विकास करने हेतु अध्यापक उनसे उनके घर के विषय में वार्तालाप करता है। जैसे कि उनके खिलौनों के बारे में, माता–पिता, भाई–बहन, पड़ोसियों एवं दोस्तों के बारे में जो वार्तालाप किया जाता है उससे न केवल श्रवण कौशल का विकास होता है बल्कि वाचन कौशल में भी बच्चा दक्ष हो जाता है।

पढ़ना–लिखना सिखाना विद्यालय का मुख्य कार्य माना जाता है। पढ़ना सार्थक क्रिया है। इसमें कई तरह के कौशल निहित होते है। अध्यापक पाठ्य–पुस्तक का शुद्ध एवं सस्वर वाचन कराता है। शब्दों का अर्थ एवं वाक्यों में प्रयोग बताता है। पढ़ें हुए अंश पर प्रश्न करता है एवं उनके उत्तर देना सिखाता है। अनुच्छेदों का मौन पठन कर उनके विचारों को समझने की दक्षता पैदा करता है। इस तरह वह बालक में श्रवण, वाचन एवं पठन कौशल का विकास करता है। हिन्दी भाषा में लिखने का कार्य देवनागरी लिपि के सभी वर्णों को शुद्ध लिखने से शुरू किया जाता है। उसके पश्चात् संयुक्ताक्षर एवं छोटे–छोटे वाक्यों को लिखने का अभ्यास कराया जाता है।

Edit with WPS Office

सुलेख, आलेख, प्रतिलेख, श्रुतलेख आदि का अभ्यास भी उत्तरोत्तर क्रम में छात्रों से कराया जाता है। उसके पश्चात् छोटी–छोटी कहानियाँ लिखना, वर्णनात्मक लेख लिखना आदि बच्चों को सिखाया जाता है। इस समस्त अभ्यास का उद्देश्य बच्चों में भाषायी दक्षताएं पैदा करवाना होता है ताकि वह भाषायी कौशल में दक्षता प्राप्त कर सकें। सुनना (श्रवण) सामान्यतः कानों द्वारा ध्वनियों को ग्रहण करने और मस्तिष्क द्वारा उनको अनुभूत करने को सुनना अथवा श्रवण कहते है। परन्तु भाषा के सन्दर्भ में सुनने का अर्थ होता है – मौखिक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त भाव एवं विचारों को सुनकर समझना। इस प्रकार जब कोइ ॅ व्यक्ति हमारे सामने अपने भाव एवं विचार मौखिक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और हम उसे सुनकर उसके भाव एवं विचार समझते और ग्रहण करते है तो हमारी यह क्रिया सुनना अथवा श्रवण कहलाती है, यह बात दूसरी है कि हम यथा भाव एवं विचार किस सीमा तक समझते और ग्रहण करते है।

<u>सुनने के आवश्यक तत्व एवं आधार</u> मौखिक भाषा सुनने और सुनकर उसका अर्थ एवं भाव समझने के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है उन्हें ही सुनने के आवश्यक तत्व एवं आधार कहते है। ये तत्व निम्नलिखित है :–

- ❖ श्रोता की श्रवणेन्द्रिय (कान)।
- ❖ श्रोता की भाषा की ध्वनियों, ध्वनि समूहों एवं शब्दों का ज्ञान।
- ❖ श्रोता में मूलध्वनियों एवं ध्वनि समूहों में अन्तर करने की योग्यता।
- ❖ श्रोता में सुनने की तत्परता, सुनने में उसकी रूचि एवं अवधान।
- ❖ श्रोता में धैर्यपूर्वक पूर्ण मनोयोग से सुनने की आदत।
- ❖ श्रोता मे ं सुनी हुई सामग्री का अर्थ एवं भाव समझने की योग्यता।
- ❖ श्रोता में बोलने वालों के हाव–भाव के अनुसार अर्थ एवं भाव समझने की योग्यता।

Edit with WPS Office

बच्चों में सुनना (श्रवण) कौशल के विकास का अर्थ है उन्हें मौखिक भाषा सुनाकर उसके अर्थ एवं भाव समझने की क्रिया में निपुण करना। और इसके लिए आवश्यक है कि उनमें सुनने के आवश्यक तत्वों का विकास किया जाए। जहाँ तक मातृभाषा के सन्दर्भ में सुनने के कौशल के विकास का प्रश्न है, इसका कुछ विकास तो बच्चों में विद्यालयों में प्रवेश लेने से पहले हो चुका होता है परन्तु उसकी अपनी सीमा होती है और यह सीमा बहुत छोटी होती है। विद्यालयों में बच्चों को मातृभाषा के सर्वमान्य रूप को सुनने और सुनकर उसका अर्थ एवं भाव समझने में दक्ष किया जाता है। इसके लिए हमें विद्यालयी शिक्षा के भिन्न–भिन्न स्वरों पर भिन्न–भिन्न कार्य करने होते है।

श्रवण कौशलों के विकास में बोलने का लहजा, शैली एवं भाषाई विविधता व इसका प्रभाव सुनकर ज्ञान प्राप्त करना एक मानवीय प्रवृत्ति है। श्रवणीय सामग्री का सुनकर अर्थ ग्रहण करना, भाषा सामग्री सुनाकर अर्थ ग्रहण कराना, भाषा शिक्षण का पहला कौशलात्मक सामान्य उद्देश्य है। इस कौशल के विकास से छात्र में ऐसी मनःस्थिति का निर्माण किया जाता है कि वह कही हुई बात समझ सकें एवं वक्ता के कथन में प्रयुक्त शब्दों, उक्तियों, मुहावरों का प्रसंगानुकूल भाव समझ सकें। इसीलिए छात्र को कथा शैलियों से परिचित कराना आवश्यक है। शब्दों और वाक्यों में सार्थकता उनका प्रथम लक्षण है।

सार्थक ध्वनियाँ मस्तिष्क में विचार या भाव बिम्ब बनाती हैं और शिक्षक उन भाव या विचार बिम्ब को स्थूल रूप देता है। बोलने की शैली व लहजे से वक्ता के भाव एवं अभिवृत्ति प्रकट होती है। कई शब्दों में सिर्फ उस अर्थ का बोध नहीं होता है बल्कि उसके लाक्षणिक एवं व्यंजक अर्थ का भी बोध होता है, जैसे गाय का लाक्षणिक प्रयोग सीधे–सादे व्यक्ति के लिए किया जाता है। कुछ वाक्यों का व्यंग्यार्थ एवं हास्यार्थ अर्थ भिन्न होता है। अतः शिक्षक को इस कौशल में दक्ष करना आवश्यक है कि छात्र भाषा का प्रसंगानुकूल (शैली एवं लहजे के हिसाब से) बोध कर सकें क्योंकि मौखिक अभिव्यक्ति की भी विभिन्न शैलियाँ होती है। यदि वक्ता केवल 'अच्छा' कह रहा है तो 'अच्छा' व्यंगात्मक, हास्यात्मक, विस्मयात्मक एवं अनुमोदनात्मक आदि

Edit with WPS Office

लहजे में कहा जा सकता है। यह श्रोता को समझना होगा कि ये 'अच्छा' किस भाव से कहा गया है। अतः शिक्षक को छात्र में अनुकूल शैली को समझने की योग्यता का विकास करना होता है। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसमें तुर्की, फारसी, अरबी, अंग्रेजी तथा संस्कृत के शब्दों का समावेश है और यही गुण भाषा को जीवित रखता है। क्योंकि भाषा में लगातार विकास एवं नये शब्दों का समावेश आवश्यक है। इसके लिए छात्रों को भाषाई विविधता से परिचित कराना भी आवश्यक है। सुनने एवं बोलने के कौशल के स्रोत एवं सामग्री श्रवण एवं वाचन कौशल का विकास भाषा शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस कौशल के विकास के लिए शिक्षक नाना प्रकार के स्रोत एवं सामग्री का प्रयोग करता है जो निम्न है – सस्वर वाचन : शिक्षक के द्वारा किये गये आदर्श वाचन और कक्षा के किसी छात्र द्वारा किये जाने वाले अनुकरण को ध्यानपूर्वक सुनकर शुद्ध उच्चारण, बलाघात, गति आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इससे शिक्षक को पता रहेगा कि छात्रों का श्रवण कौशल एवं पठन व वाचन कौशल कितना विकसित हो रहा है। श्रुत लेख : इससे श्रवण–कौशल के प्रतिक्षण एवं विकास पर ध्यान दिया जा सकता है। श्रुत लेख शुद्ध लिखने के अभ्यास के लिए सर्वश्रेष्ठ साधन है। श्रुत–लेख के अन्तर्गत बालकों को सुनकर लिखना होता है। जो बालक ध्यानपूर्वक सुनेगा, वह समस्त सामग्री को सही और शुद्धता के साथ लिख सकेगा। लेकिन जो छात्र ध्यानपूर्वक सुनने का प्रयास नहीं करेगा, उसके लेख में शब्द या वाक्यों के छूटने का भय बना रहेगा। श्रुत–लेख सामग्री छात्रों के मानसिक और बौद्धिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।

भाषण : श्रवण का प्रशिक्षण देने हेतु भाषण का भी अभ्यास कराना लाभकारी होता है। छात्रों को पहले से यह बताना उचित होता है कि भाषण के बाद उनसे प्रश्न पूछे जाये ं गे, तो सभी छात्र भाषण को ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

वाद–विवाद : श्रवण–कौशल का प्रशिक्षण देने हेतु वाद–विवाद क्रिया बहुत सार्थक और सशक्त होती है। इस क्रिया में भाग लेने वाले छात्रों को बहुत सचेत रहना पड़ता है। अगर वे ध्यान से नहीं सुनेंगे तो प्रतिपक्षी वक्ता के प्रश्नों का उत्तर देने में असफल रहेंगे। वाद–विवाद के समाप्त

Edit with WPS Office

होने पर अन्य छात्रों से प्रश्न करने चाहिए ताकि इस बात का पता लग सके कि कक्षा में कितने छात्र ध्यानपूर्वक सुन रहे थे। विषय वस्तु पर आधारित प्रश्न : शिक्षक को छात्रों से पठित–सामग्री पर प्रश्न पूछने चाहिए। छात्रों के उत्तर से यह जाँच हो जायेगी कि छात्र सुनकर विषय–वस्तु को ग्रहण कर रहे हैं या नहीं। शिक्षक के द्वारा प्रश्न पूछे जाने से छात्र भी सावधान हो जायेंगे तथा कक्षा में शिक्षक की बात को ध्यानपूर्वक सुनेंगे। कहानी कहना तथा सुनना : सर्वप्रथम शिक्षक बालकों को कहानी सुनाये तथा बाद में उनसे सुने। इससे भी ज्ञात हो जायेगा कि छात्रों ने कहानी ध्यानपूर्वक सुनी या नहीं। बालक कहानी सुनकर अपार आनन्द लेते हैं। इसलिये बालकों का ध्यान कहानी सुनने की ओर आकर्षित किया जा सकता है। मल्टीमीडिया : ग्रामोफोन से कहानी, कविता, नाटक आदि सुनकर छात्र–छात्रों की साहित्यिक रूचि पैदा की जा सकती है। शुद्ध–उच्चारण की दृष्टि से इसकी सहायता ली जा सकती है।

टेपरिकॉर्डर : टेपरिकॉर्डर के द्वारा किसी साहित्यिक कार्यक्रम को रिकॉर्ड करके जब चाहें छात्र–छात्राओं को सुनाया जा सकता है। चलचित्र (सिनेमा) में आवाज सुनाई देने के साथ–साथ दृश्य भी दिखाई देते हैं। नाटकों को बालक ध्यान से देखने के साथ–साथ ध्यान से सुनते भी है। श्रवण–कौशल के विकास हेतु चलचित्र का प्रयोग करना लाभकारी सिद्ध होता है। जिस प्रकार किसी भी वार्ता आदि को टेप करके टेपरिकॉर्डर द्वारा बालकों को सुनाया जा सकता है, उसी प्रकार किसी कार्यक्रम को रिकॉर्ड कर वीडियो के माध्यम से दूरदर्शन पर दिखाया जा सकता है। विद्वानों के भाषणों एवं विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों की कैसेट का प्रयोग किया जा सकता है। इससे श्रवण कौशल के साथ–साथ भाषण–कौशल को विकसित करने में भी सहायता मिलती है। रोल प्ले : रोल प्ले के माध्यम से छात्रों का श्रवण एवं वाचन दोनों कौशलों का भलीभाँति विकास सम्भव हैं। इसमें किसी का रोल करने को पूर्व नियोजित ढंग छात्र को एक चरित्र दिया जाता है। उस चरित्र के अनुसार छात्र उसका रोल करता है। उदाहरणस्वरूप रेल के टिकट खरीदने का, फोन पर एक मीटिंग करने का, किसी भी प्रकार का रोल प्ले करवाया जा सकता है। परिस्थितियों के अनुसार संवाद : विभिन्न परिस्थितियों में किस प्रकार के भाव को प्रकट करना है एवं कैसे वाचन करना है। इसके लिए शिक्षक कृत्रिम रूप से ऐसी परिस्थितियाँ बनाने एवं उनके अनुसार छात्रों को संवाद बोलने के लिए प्रेरित करें।

Edit with WPS Office

छात्र–छात्राओं को अपने दैनिक जीवन में अनेक प्रकार के अनुभव प्राप्त होते हैं।

शिक्षक उनको समय–समय पर उन अनुभवों की मौखिक व्याख्या करने के लिए अवसर प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त नाटक साहित्य की ऐसी सशक्त एवं सार्थक विद्या है, जिसके माध्यम से मौखिक अभिव्यक्ति के सभी गुणों का विकास होता है। इसमें भाग लेने वाले सभी छात्र–छात्राओं को पात्र के चरित्र के अनुसार उचित हाव–भाव, उतार–चढ़ाव एवं प्रवाह के साथ संवाद प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है। नाटक मंचन के द्वारा छात्र–छात्राएं मौखिक–अभिव्यक्ति की कई शैलियों को सीखते हैं।

भाषा परिवार

भाषा का संबंध व्यक्ति, समाज और देश से होता हैं। इसलिए प्रत्येक भाषा की निजी विशेषताएं होती हैं। इनके आधार पर वह एक ओर कुछ भाषाओं से समानता स्थापित करती हैं तो वहीं दूसरी ओर बहुत सी भाषाओं में असमानता भी दिखाई देती हैं। इसी के आधार पर ही उन्हें भाषा परिवारों में विभाजित किया जाता हैं। इस वर्गीकरण का आधार पूर्णतः वैज्ञानिक होता हैं । वस्तुतः विश्व की समस्त भाषाओं को उनके गुणों और साम्य–वैषम्य के आधार पर भाषा परिवारों में विभाजित किया गया हैं । विश्व में कुल ग्यारह भाषा परिवार हैं– भारोपीय, द्रविड, आस्ट्रिक, तिब्बती– चीनी, सैमेटिक–हैमेटिक, यूराल–अल्टाइक, मलै–पॉलीनीशियन, बंटू और मध्य अफ्रीकी। इनमें से चार भाषा परिवारों की भाषाएं भारत में बोली जाती हैं: द्रविड, ऑस्ट्रिक, भारोपीय और तिब्बती–चीनी। इनमें से भारोपीय परिवार सबसे विस्तृत हैं।

भारोपीय परिवार संसार का सबसे महत्त्वपूर्ण भाषा परिवार हैं। इसका विस्तार भारतवर्ष से लेकर यूरोप तक हैं। इस परिवार की भाषाएं को दो वर्गों में विभक्त किया गया हैं– केतुम् और सतम्। इनमें से सतम् वर्ग के अंतर्गत भारत–ईरानी या आर्य शाखा हैं। इस भारत–ईरानी शाखा

Edit with WPS Office

की उप–शाखाएं ईरानी, दरद और भारतीय आर्यभाषाएं हैं। इनमें से दरद और भारतीय आर्यभाषा उप–शाखाओं की भाषाएं भारतवर्ष में बोली जाती हैं

दरद उपशाखा

इस उपशाखा की प्रधान भाषा कश्मीरी हैं। कश्मीरी जम्मू–कश्मीर के लगभग 10,000 वर्गमील के विस्तृत क्षेत्र में बोली जाती हैं । भारतीय संविधान की आठवीं धारा के अंतर्गत यह जम्मू कश्मीर की राजभाषा हैं। अनंतनाग, श्रीनगर, बारामुला तथा डोडा में यह प्रमुख रूप से बोली जाती हैं। भारतीय जनगणना 2001 के अनुसार मातृभाषा के रूप में यह 55,27,698 व्यक्तियों द्वारा बोली जाती हैं तथा संख्या की दृष्टि से भारतीय भाषाओं में इसका स्थान 15वां हैं। कश्मीरी लोग इसे 'काशूर नाम से पुकारते हैं किंतु हमारे संविधान में अन्य भाषाओं के साथ इसे कश्मीरी नाम दिया गया हैं। कश्मीरी नाम का प्रयोग यद्यपि अमीर खुसरों ने तेरहवीं शताब्दी में किया था ।

भारतीय आर्य उप–शाखा

भारत के अधिकांश भू–भाग पर भारतीय आर्य उपशाखा की भाषाएं बोली जाती हैं। भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित भाषाओं में प्रधान नौ भाषाएं– असमिया, ओड़िया, बांग्ला, मराठी, पंजाबी, गुजराती, सिंधी, हिंदी और उर्दू इसी उपशाखा की भाषाएं हैं।

ओड़िया

ओड़िया उड़ीसा प्रांत की राजभाषा हैं जो उड़ीसा में बोली जाती हैं तथा इसका प्रभाव बंगाल से जुड़े क्षेत्रों पर भी देखने को मिलता हैं जिनमें मेदिनीपुर, बिहार सिंहभूम, सराईकेला, खरसुआ आदि शामिल हैं। 2001 में हुई भारतीय जनगणना के अनुसार लगभग 3 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा उड़िया हैं जो कि भारत में संख्या की दृष्टि से दसवें स्थान पर हैं। ओडिया के प्राचीन तथा अर्वाचीन, दोनों ही साहित्य संपन्न हैं। आधुनिक कवियों में गोप बंधुदास, नीलकंठ दास, पद्मचरण पट्टनायक, लक्ष्मीकांत महापात्रा तथा कुंतला सावंत आदि सुविख्यात नाम हैं। जो कि ओड़िया के साहित्यकार हैं।

Edit with WPS Office

बांग्ला

आर्यभाषा परिवार की मागधी अपभ्रंश प्रसूत, आधुनिक आर्यभाषा बांग्ला पश्चिम बंगाल में बोलचाल की मुख्य भाषा हैं। भारतीय संविधान की आठवीं धारा के अंतर्गत इसे पश्चिम बंगाल की राजभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त हैं। इसमें मूलतः पांच प्रधान उपभाषाएं हैं:

(1) उत्तरी पूर्वी बांग्ला

(2) उत्तरी बांग्ला

(3)पूर्वी बांग्ला

(4) पश्चिमी बांग्ला

(5) दक्षिण–पश्चिमी बांग्ला

इनमें से प्रथम तीन बांग्लादेश में तथा शेष दो भारत गणराज्य के पश्चिम बंगाल राज्य में बोली जाती हैं। बौद्धधर्म के सहजिया संप्रदाय के चर्यापदों में बांग्ला भाषा का प्राचीनतम साहित्यिक रूप देखने को मिलता हैं। चर्यापदों के काफी समय बाद बांग्ला भाषा का दूसरा काव्यमय रूप हमे कृष्ण की रस गाथाओं को आधार बनाकर लिखे गए जयदेव के काव्य में मिलता हैं। चैतन्य महाप्रभु कृष्ण कीर्तन भी बांग्ला भाषा का पंद्रहवी शती का रूप प्रस्तुत करते हैं। आधुनिक युग के साहित्यकारों में रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरत चंद्र, विमल मित्र, ताराशंकर बंधोपाध्याय, शंकर आदि नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

असमिया

मध्ययुग की अर्द्धमगधी से प्रसूत, भारत के पूर्वी भाग में 85000 वर्गमील के विस्तृत तथा पहाड़ी प्रदेश में बोली जाने वाली असमिया, असम की राजभाषा हैं। असमिया मुख्यतः ब्रह्मपुत्र घाटी के छह जिलों में बोली जाती हैं। भारतीय जनगणना 2001 के अनुसार भारत में लगभग 1.5 प्रतिशत व्यक्तियों ने इसे अपनी मातृभाषा कहा हैं। असमियां की बोलियां झरवा, मयांग आदि हैं

Edit with WPS Office

तथा असमिया असम के अतिरिक्त मेघालय तथा अरूणाचल प्रदेश में भी बोली जाती हैं। इसकी लिपि देवनागरी लिपि का ही रूप हैं जो कि बांग्ला से विकसित हुई हैं। असमिया भाषा का प्राचीनतम साहित्यिक रूप हमें चर्यापद के दोहों में मिलता हैं। असमिया साहित्यिक दृष्टि से संपन्न भाषा हैं। उदीयमान कवियों में नवकल बरूआ, हरिहर काकली, वीरेंद्र बरगोहाई के नाम उल्लेखनीय हैं।

सिंधी

भारतीय आर्य भाषाओं की उदीची शाखा की ब्राचड़ अपभ्रंश से विकसित सिंधी भारतवर्ष में 25,35,455 लोगों द्वारा मातृभाषा स्वीकार की गई हैं। इसके बोलने वाले महाराष्ट्र, पंजाब तथा मध्य प्रदेश से भी हैं। ये मूल रूप से सिंध प्रदेश की भाषा हैं।

पंजाबी

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में सिंधी और लहंदा ही सहोदरा पंजाब राज्य की प्रधान बोलचाल की भाषा हैं। इसके बोलने वालों की संख्या 2.8 प्रतिशत हैं तथा जनसंख्या की दृष्टि से भारतवर्ष में प्रचलित भाषाओं में इसका स्थान ग्यारहवां हैं। पंजाबी की मुख्य लिपि गुरूमुखी हैं, जो देवनागरी का ही एक रूप हैं। गुरू नानक, गुरू अर्जुन, भाई गुरूदास पंजाबी के भक्त कवि हैं। पंजाबी की 29 बोलियां हैं, जिसमें भटियाली, कलूहरी, जंगरी, गुरूमुखी, कांगड़ा तथा राठी प्रधान हैं।

गुजराती

शौरसेनी अपभ्रंश प्रसूत गुजराती 710,072 वर्गमील के गुजरात प्रदेश के उत्तर में कच्छ और मारवाड़ा से लेकर दक्षिण में मुंबई के थाने जिले तथा पश्चिम में अरब सागर एवं पूर्व में मालवा और खानदेश के बीच भाजग 2001 के अनुसार 4.4 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा बोली

Edit with WPS Office

जातीहैं। इसकी लिपि शिरोरेखा मुक्त देवनागरी लिपि ही हैं।

मराठी

महराष्ट्री अपभ्रंश मराठी, महाराष्ट्र की बोलचाल की प्रमुख भाषा हैं तथा भारतीय संविधान के अनुसार महाराष्ट्र राज्य की राजभाषा भी स्वीकृत की गई हैं। इसके बोलने वालों की संख्या 6.9 प्रतिशत हैं जो कि भारतीय भाषाओं में जनसंख्या की दृष्टि से चौथे स्थान पर आती हैं। इसकी लगभग 65 बोलियां हैं। इसकी प्रमुख बोलियां हलबी, कोंकणी, कमारी, कटिया, कटकरी, कोठी, मराठी हैं। मराठी की लिपि देवनागरी हैं। साहित्यिक दृष्टि से मराठी अति संपन्न हैं। ज्ञानदेव, नामदेव, ज्ञानेश्वर, एकनाथ, मुक्तेश्वर, तुकाराम, रामदास, मराठी के प्रसिद्ध संत कवि हैं।

हिंदी

हिंदी आधुनिक आर्यभाषा परिवार की मुख्य भाषा हैं। इसे भारतीय संविधान में भारतीय संघ की राजभाषा स्वीकृत किया गया हैं। हिंदी भारत के एक विस्तृत भूभाग की भाषा हैं। यह उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ, बिहार, झारखंड, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली व अंडमान तथा निकोबार में प्रमुख रूप से बोली जाती हैं। भारतीय जनगणना 2001 के आंकड़े अनुसार भारत की 41.03 प्रतिशत जनता मातृभाषा के रूप में हिंदी का व्यवहार करती हैं। हिंदी प्रधानतया देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं।

भारतीय भाषाओं की अष्टम अनुसूची में उर्दू तथा संस्कृत भाषा का भी उल्लेख हैं। भारतीय जनगणना के अनुसार मातृभाषा के रूप में हिंदी का व्यवहार करती हैं। हिंदी प्रधानतया देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं।

भारतीय भाषाओं की अष्टम अनुसूची में उर्दू तथा संस्कृत भाषा का भी उल्लेख हैं। भारतीय जनगणना के अनुसार मातृभाषा के रूप में उर्दू का प्रयोग करने वालों की संख्या 5.91 प्रतिशत हैं। संस्कृत भाषा का मातृभाषा के रूप में प्रयोग करने वालों की संख्या 14,135 हैं। वस्तुतः संस्कृत का व्यवहार बोलचाल की भाषा के रूप में नगण्य ही हैं। उर्दू अनुसूचित भाषाओं में प्रमुख स्थान रखती हैं। राजनीतिक दृष्टि से वह पाकिस्तान की राष्ट्रभाषा भी हैं पर भाषा

Edit with WPS Office

वैज्ञानिक दृष्टि से उर्दू हिंदी की अरबी–फारसी शब्द प्रधान एक साहित्यिक शैली हैं। मुगलों के उपरांत भारत आने पर सैनिक शिविरों में भारतीय व्यापारियों तथा मुगल सैनिक खरीददारों के बीच जिस भाषाका विकास हुआ, वह भाषा संरचना की दृष्टि से खड़ी बोली थी तथा उसके शब्द भंडार में फारसी– अरबी शब्द भी थे। उर्दू शब्दों का प्रयोग भाषा के अर्थ में कब से प्रारंभ हुआ

भारत की संश्लिष्ट भाषिक तथा सामाजिक संरचना के कारण विद्वानों ने कभी तो भारतवर्ष को भाषा सामाजिक विकट विग्रह (सोशियो लिंग्विस्टिक जाईंट) तो कभी भाषिक सामाजिक इकाईयों के मूल में विद्यमान एकात्मकता के कारण इस एक भाषिक क्षेत्र की संज्ञा से अभिहित किया हैं। भारतीय जनगणना के अनुसार भारत में चार परिवारों (भारोपीय, द्रविड, मुंडा या ऑस्ट्रिक तथा तिब्बती–चीनी परिवार) की 1652 भाषाएं बोली जाती हैं। इनमें से 1455 भाषाएं ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या दस हजार से कम हैं। शेष 197 भाषाएं में से देश की चौदह भाषाओं को भारत के संविधान निर्माताओं ने देश की प्रधान भाषा मानकर आठवीं अनुसूची में रखा गया था। ये भाषाएं निम्न थी।

असमिया	ओड़िया	उर्दू	कन्नड़	कश्मीरी	गुजराती
तमिल	तेलुगू	पंजाबी	बांग्ला	मराठी	मलयालम
संस्कृत	हिंदी				

इन 14 भाषाओं के बोलने वालों की संख्या देशर की संकुल जनसंख्या का 98 प्रतिशत थी। कालांतर में 8वीं अनुसूची में सिंधी जुड़ी और बाद में नेपाली, कोंकणी तथा मणिपुरी जोड़ दी गई । अब अष्टम सूची में 18 भाषा की गणना हुई और 1991 की जनगणना के अनुसार इन भाषाओं के बोलने वालों की संचया देश की जनसंख्या का 99.92 प्रतिशत हैं। निष्कर्षतः आज देश की प्रधान भाषाएं 22 हैं। ये भाषाए विश्व के तीन भाषा परिवारों भारोपीय परिवार जिसके अंतर्गत असमिया, ओड़िया, उर्दू, कश्मीरी, गुजराती, पंजाबीख बांगल, मराठी, सिंधी कोंकणी, नेपाली, संस्कृत व हिंदी, द्रविड़ परिवार जिसके अंतर्गत तमिल , तेलुगू, मलयामल तथा कन्नड तथा तिब्बती– चीनी परिवार की मणिपुरी हैं।

Edit with WPS Office

इन प्रधान भाषाओं में हिंदी केंदीय महत्त्व की भाषा बनी। उसे राष्ट्रभाषाख जालभाषा तथा संपर्क भाषा का गौरव मिला। इसका कारण था कि हिंदी क्षेत्र विस्तार की दृश्टि से देश के सबसे बड़े भू–भाग की भाषा हैं। यह देश के ग्यारह पेदेशों – उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, हिमाचल, हरियाणा, छत्तीसगढ़, उत्तरांचल, झारखंड, दिल्ली तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह की प्रधान भाषा है; इसके बोलने वालों की संचया देश की जनगणना काा 42.88 प्रतिशत हैं तथा व्यापार, जनसंचार तथा राजनीति कीदृष्टि से यह देश की संपर्क भाषा हैं। इसीलिए देश की भाषाओं में हिंदी प्रतिनिधि भाषा मानी गई सीावतः यही कारण हैं कि जहां अन्य भारतीय भाषाएं अपने–अपने क्षेत्रीय नामों से जानी जाती हैं।– पंजाबी, पंजाब की भाषा; मराठी, महाराष्ट्र की; बांग्ला, बंगाल की, असमिया असम की; वहीं हिंदी या हिंदुस्तानी, हिंदुस्तान की भाषा कही जाती हैं। हिंदी की इसी व्यापकता को देखकर महात्मा गांधी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा की संज्ञा दी थी और देश के सभी नेताओं ने जो पमुखतः हिंदी प्रदेश के थे, हिंदी का समर्थन किया था, उसके व्यापक प्रचार–प्रसार की योजना बनाई थी तथा वह देश के स्वाधीनता आंदोलन में शंखनाद की भाषा भी बनी थी।

भारत के अधिकांश भाषाएं चाहे वे किसी भी भाषा परिवार से संबंधित होख उनमें अद्भुत समानता हैं। भारत की 18 प्रमुख भाषाएं जिनकी गणना भारतीय संविधन की अष्टम अनुसूची में हैं, वे तीन भाषा परिवारों, भारोपीय परिवार, द्रविड परिवार तथा तिब्बती–चीनी परिवार की भाषाएं हैं। चौथे भाषा परिवार मुंडा परिवार की भरतीय भाषा संथाली हैं। उदहारण के लिए हिंदी, भारोपीय परिवार की आधुनिक भारतीय आर्यभाषा हैं। उसमें तथा द्रविड परिवार की भाषा तमिल में कई समानताएं हैं जबकि भारोपीय परिवार की यूरोपीय भषाओं अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच में वे समानताएं नहीं हैं। इस प्रकार हिंदी अलग परिवार की भाषा तमिल के अधिक निकट हैं जबकि अपने ही परिवार की अंग्रेजी , जर्मन आदि से दूर । इसी प्रकार हिंदी और तमिल की समानता मुंडा परिवार की भाषाओं में देखी जाती हैं। अपने परिवार की भाषाओं के अतिरिक्त विभिन्न भाषा परिवारों की भारतीय भाषाओं की यह समानता विभिन्नता में उकता के सिद्धांत को पुष्ट करती हैं।

भारतीय भाषाओं तथा हिंदी के अंतर्सबंधों को यदि हम देखे तो हमें अद्भुत समानता?ए

Edit with WPS Office

दिखती हैं जो नितांत संयोग न होकर उन भाषाओं के सांस्कृतिक सामाजिक संबंधो की द्योतक हैं और बाहरी विभिन्नता तथा आंतरिक संयोग न होकर उन ाााषाओं के सांस्कृतिक सामाजिक संबंधों की द्योतक एकता को पुष्ट करती हैं। यह समानता ध्वनि, घरब्द , वाक्य तथा लिपि सभी स्तर पर दिखाई पड़ती हैं।

भारतीय भाषाओं में चाहे वे किसी भी भाषा परिवार की हो उनकी ध्वन्यात्मक व्यवस्थत में एक समानता हैं। हिंदी एक व्यापक क्षेत्र की भाषा हैं और हिंदी बोलने वाले लगभग सारे देश में फैले हुए हैं इसलिए स्वभाविक हैं कि विभिन्न भारतीय भाषाओं से भी शब्द हिंदी के लिए हो।

शब्द स्तर पर हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में समानता दिखती हैं। हिंदी का शब्द समूह प्रधानतः भाग भारतीय आर्य भाषा का शब्द समूह हैं । हिंदी में बहुत से शब्द अविकल रूप से संस्कृत से आए – अग्नि, नभ, वायु, जल, धरती, माता, पिता, धर्म जन्म, मृत्यु आर्दि। कुछ शब्द संस्कृत से पालि, प्राकृत, तथा अपभ्रंश से होते हुए हिंदी में आए और अन्य भारतीय भाषाओं में पहुंचे। संस्कृत के वे शब्द जो हिंदी में ध्वन्यात्मक परिवर्तन लेकर आए और अन्य भारतीय भाषाओं में भी पहुंचे। संस्कृत के वे शब्द जो हिंदी में ध्वन्यात्मक परिवर्तन लेकर आए वे तद्‌भव शब्द कहलाए जैसे अग्नि से आग, पूर्व से पूरब, दंत से दांत, मयूर से मोर, चतुर्दश से चौदह, कृष्ण से कान्हा, रात्रि से रात आदि। हिंदी में देशज शब्दों की गणना होती हैं जिनके स्रोत की आज हमें कोई भी विशेष जानकारी नहीं हैं। हिंदी में देशज शब्दों में उन शब्दों की गणना होती हैं जिनके स्रोत की आज हमें कोई जानकारी नहीं हैं। ऐसे शब्द मूलतः देश में उत्पन्न (देशज) या बने हुए क्षेत्रीय शब्द माने गए हैं। पेड़, कुत्ता, बिल्ली, चूहा, झगड़ा, झूठ लड़का आदि इसी वर्ग के शब्द हैं।

हिंदी चूंकि एक व्यापक क्षेत्र की भाषा हैं और हिंदी बोलने वाले लगभग सारे देश में फैले हुए हैं इसलिए स्वाभाविक हैं कि विभिन्न भारतीय भाषाओं से भी शब्द हिंदी ने लिए हों। इन शब्दों में कहीं तो ध्वन्यात्मक परिवर्तन हुआ तो कहीं उन्हें रूप से ग्रहण कर लिया गया। हिंदी की सीमावर्ती भारतीय भाषाएं पंजाबी, सिंधी, गुजराती, मराठी, तेलुगु, ओड़िया आदि हैं। हिंदी ने उपन्यास, गल्प, धन्यवाद बांग्ला से, वाड्‌मय, लागू, चालू, प्रगति, मराठी से, हड़ताल गुजराती से

Edit with WPS Office

छोले–भठूरे पंजाबी भाषा से लिए।

भारतीय भाषओं में आयातित इस शब्दावली की एक विशेषता और भी हैं कि भारतीय भाषाओं ने तत्सम, तदभव आदि संस्कृत शब्दों तथा फारसी अरबी शब्दों के साथ उनकी रूप रचना भी ग्रहण की हैं तो वहीं उन्हें अपनी रूप रचना में भी ढ़ाला हैं। विदेशी प्रत्ययों और उपसर्गों को लेकर हम भारतीय भाषाओं में भी शब्दों का निर्माण करते हैं। उदहारणार्थ हिंदी भाषा का बेसूरा, ना समझ, चूड़ीदार गुजराती बेमान (बेहोश), धारदार (पैना)। इस समान शब्द निर्माण पद्धति के कारण भारतीय भाषाओं का पारिवारिक बोधगम्यता भी बढ़ी हैं।

भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में भाषिक स्तर पर समानता हिंदी और भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंधों की व्याख्या करती हैं। भारतीय भाषाओं की इस मूलभूत एकता का कारण देश की सांस्कृतिक एकता हैं। धर्म, दर्शन, साहित्य कला तथा संस्कार की एकता भाषाई एकता को सुदृढ़ करती हैं। सभी भाषाओं की अपनी–अपनी व्याकरणिक विशेषताएं हैं, उनकी अपनी समृद्ध साहित्य कला हैं। प्रमुख भारतीय दर्शनों

भारतीय बहुभाषिता

भाषा विचारों के आदान प्रदान का माध्यम होती हैं। भाषा जितनी सुबोध, सरल और सहज होगी, भाव संप्रेषण उतना ही सफल और सशक्त होगा। भारतीय भाषाओं की परंपरा, इतिहास और विकास क्रम में हिंदी का वही स्थान एवं महत्त्व हैं जो पुरा काल में संस्कृत का था। वर्तमान में हिंदी भाषा न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी करोड़ो लोगों की संपर्क भाषा बनी हुई हैं। भारत का आबादी का तकरीबन आधा हिस्सा मूलतः हिंदी भाषी हैं और वह आपसी विचार–विनिमय के लिए हिंदी का ही प्रयोग करता हैं। दरअसल भाषा किसी देश के इतिहास का वह आईना होती हैं, जिसमें भविष्य भी देखा जाता हैं । हिंदी और संस्कृत भारत का स्वाभिमान हैं और हिंदी के विकास तथा प्रचार और प्रसार में वास्तविक रूप से भारत के भविष्य

Edit with WPS Office

की झांकी देखी जा सकती हैं। आज के दिन हिंदी स्वरूप वैश्विक हो रहा हैं, वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पकड़ मजबूत कर रही हैं साथ ही वह अपने स्वरूप को निरंतर मांज भी रही हैं।

हिंदी भाषा की देवनागरी वर्णमाला की वैज्ञानिकता निम्नलिखित बिंदुओं से समझी जा सकती हैं

1 **वर्णों की संरचना** :– देवनागरी वर्णमाला में वर्णों की संरचना वैज्ञानिक हैं। इसमें 47 प्राथमिक वर्ण हैं, जिनमें 14 स्वर और 33 व्यंजन हैं। ये वर्ण विभिन्न ध्वनियों को प्रस्तुत करते हैं और उनकी संरचना वैज्ञानिक हैं।

2. **ध्वनि–अक्षर सिद्धांत** :– देवनागरी वर्णमाला में ध्वनि–अक्षर सिद्धांत का पालन किया जाता हैं जिसमें प्रत्येक वर्ण की एक विशिष्ट ध्वनि होती हैं। यह सिद्धांत वैज्ञानिक हैं और भाषा की समझ में बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं।

3. **वर्णों का अनुक्रम**:– देवनागरी वर्णमाला में वर्णों की अनुक्रम वैज्ञानिक हैं। इसमें वर्णों को उनकी ध्वनि और स्वरूप के आधार पर व्यवस्थित किया जाता हैं, जिससे भाषा की समझ में सुगमता आती हैं।

5. **भाषा का विकास**:– देवनागरी वर्णमाला ने भाषा के विकास में बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। इसमें नए वर्णों की खोज और पुराने वर्णों के परिवर्तन कें माध्यम से भाषा को विकसित किया गया हैं।

उपर्युक्त बिंदुओं से स्पष्ट होता हैं कि देवनागरी वर्ण माला की वैज्ञानिकता इसकी संरचना, ध्वनि–अक्षर सिद्धांत, वर्णों के अनुक्रम, लिपि की संरचना और भाषा के विकास में बड़ी भूमिका निभाती हैं।

सन् 1965 ई तक अंग्रेजी भाषा का प्रावधान रखा गया । लेकिन बाद में संशोधन कर इसे आगे के लिए बढ़ा दिया गया। आज हिंदी भारत के अलावा कई देशों में व्यवहृत हो रही हैं। दुनिया के कई छोटे बड़े देशों में प्रवासी भारतीयों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही हैं। दुनिया में अनेक देशों के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य में भारतीय मूल के

Edit with WPS Office

नागरिकों और हिंदी भाषा की उपस्थिति अब प्रभावी मानी जा रही हैं। इस बड़े फलक पर चहुंमुखी चुनौतियों तथा प्रतियोगिताओं के बीच से उभर–उभरकर अब भारतीय मूल के अनगिनत प्रवासी अपनी उपस्थिति को सार्थक सिद्ध करते हुए हिंदी भाषा को सृजन और अभिव्यक्ति का माध्यम बना रहे हैं।

आज वैश्विकरण के दौर में आज आर्थिक अवधारणा हैं जो आज एक सांस्कृतिक और बहुत कुछ अर्थों में भाषाई संस्कार से भी जुड़े हुए हैं। वैश्विकरण आधुनिक विश्व का वह स्तंभ हैं जिस पर खड़े होकर दुनिया के हर समाज को देखा, समझा और महसूस किया जा सकता हैं । वैश्विकरण आधुनिकता का वह मापदंड हैं जो किसी भी व्यक्ति समाज राष्ट्र को उसकी भौगोलिक सीमाओं से परे हटाकर एक समान धरातल उपलब्ध कराता हैं, जहां वह अपनी पहचान के साथ अपने स्थान को पुष्ट करता हैं।

हिंदी के विकास और विस्तार की कहानी बड़ी रोचक और उतार–चढ़ाव से भरपूर हैं। मध्यकाल की शैरसेनी अपभ्रंश से विकसित पश्चिमी हिंदी से निःसृत खड़ी बोली का विकास आधुनिक काल में हुआ। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने देश को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य किया। भारत के स्वाधीनता आंदोलन में पूरे देश को जोड़ने में हिंदी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा हैं। " स्वाधीनता संग्राम में हिंदी और लोकभाषाओं की भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा हैं। स्वाधीनता की बलिवेदी पर न्यौछावर होने की लौ जो देशवासियों के भीतर जगाई गई, वह हिंदी भाषा के माध्यम से ही जगाई गई थी। क्योंकि इस संग्राम में हर तबके, हर मजहब, हर भाषाा और विभिन्न संस्कृतियों के जानने वाले लोग थे, जिनके मध्य संचार और व्यवहार का कार्य हिंदी ही करती थी। स्वाधीनता संग्राम में सामान्य जन की भागीदारी महत्त्वपूर्ण रही हैं। विशिष्ट लोगों का कार्य दिशा–निर्देशन करना एवं उन्हें सही व गलत राह की पहचान कराना था। भारत में स्वाधीनता की जो लौं जलाई गई, वह मात्र राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए ही नहीं थी वरन् सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा के लिए भी प्रमुख थी। भारत में साहित्य, संस्कृति और हिंदी एक दूसरे के पर्याय रहें, ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।"

बहुभाषिकता के संबंध में विद्वानों ने भिन्न–भिन्न प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं। इसका

Edit with WPS Office

मूलभूत कारण यह हैं कि पश्चिम के अधिकांश देश एकभाषिक रहे हैं या फिर अगर वहां बहुभाषिकता की स्थिति हैं भी तो उसके मूल में यह कारण रहा हैं कि वहां लोग अन्य जगहों से प्रवास करके पहुंचे। मुख्य रूप से ऐसे ही एकभाषिक पश्चिमी देशों के भाषाविदों ने इस भ्रामक धारणा को प्रश्रय दिया हैं कि किसी भी देश की स्वभाविक स्थिति एक भाषा– भाषी होने लगी। कैंब्रिज विश्वविद्यालय के लॉरे जैसे विद्वानों ने तो इसे बच्चों के बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के लिए नुक्सान देह माना हैं। उन्होंने 1890 में कहा था कि," यदि किसी बच्चे के लिए किन्ही दो समृद्ध भाषाओं के साथ जीना पड़े तो यह बहुत खराब होगा। उसका बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास दोगुना नहीं जाएगा बल्कि वह आधा–अधूरा होगा। इन स्थितियों में मन–मस्तिष्क और व्यक्तित्व की एकता कायम रखना बहुत कठिन होगा।'

(It is the functional allocation 'If it were possible for a child to live in two languages at once equally well, so much the worse. His intellectual and spiritual growth would not there by be doubled, but halved. Unity of mind and character would have great difficulty in asserting itself in such circumstances)

अधिक भाषाएं सीखने को हानिकारक मानने संबंधी यही धारणा तकरीबन कई वर्षों तक समस्त विश्व में कायम रही। लेकिन परवर्ती विद्वानों ने इस धारणा को गलत सिद्ध करके द्विभाषिकता के सकारात्मक पहलुओं पर प्रकाश डाला। इन पहलुओं का जिन संदर्भों में देखा जा सकता हैं – बहुभाषिकता और बौद्धिक विकास; बहुभाषिकता और सर्जनात्मक चिंतन; बहुभाषिकता और संप्रेषणात्मक संवेदनशीलता और बहुभाषिका और राष्ट्रीय विकास।

Edit with WPS Office

राज्य में भाषा का योगदान

भाषिक अभिव्यक्तियों के विश्लेषण के द्वारा स्रोतभाषा के पाठ के अर्थ को भलीभाँति ग्रहण करता है। एक सजग पाठक के रूप में अनुवादक मूल लेखक द्वारा अभिव्यक्त कथ्य/संदेश में निहित शब्दार्थ एवं भाषिक संरचनाओं के बहुआयामी प्रयोगों का विश्लेषण करता है और उनके द्वारा संप्रेषित की जा रही स्थूल एवं सूक्ष्म अर्थच्छवियों को यथासंभव पकड़ने का प्रयास करता है। यह प्रक्रिया निम्नलिखित स्तरों पर की जाती है।

किसी एक शब्द का अभिधात्मक, लक्षणात्मक एवं व्यंजनात्मक प्रयोग अर्थ की विभिन्नता दिखाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि अनुवादक भाषिक अभिव्यक्ति के अनुसार ही अर्थग्रहण करे, अन्यथा अर्थ–परिवर्तन हो सकता है। वास्तव में भाषाओं की प्रकृतिगत भिन्नता के कारण यह कार्य अत्यधिक कठिन हो जाता है। उदाहरण के लिए, 'पानी' शब्द के विभिन्न भाषिक प्रयोग भिन्न–भिन्न अर्थों की प्रतीति कराते हैं। इनमें अर्थ की सूक्ष्मता का अंतर निहित रहता है।

उदहारणार्थः–

वह उसका पानी भरता है

उसका पानी उतर गया

उसका अपना पानी है

उसका पानी देख लीजिए

उसमें कोई पानी नहीं है

प्रकृति पक्षियों को भी दाना–पानी देती है

वह पानी–पानी हो गया

Edit with WPS Office

सब कुछ पानी हो गया

उसने पानी की तरह पैसा बहाया

उसको यहाँ का पानी लग गया है

उसका हुक्का–पानी बंद हो गया है

उसने घाट–घाट का पानी पिया

वह हवा–पानी बदलने शिमला गया है

उसने पानी पीकर अपनी प्यास बुझाई

उपर्युक्त वाक्यों में शब्द एक ही इस्तेमाल हुआ हैं 'पानी' परंतु उसका हर वाक्य में भाव बदल गया हैं।'वह उसका पानी भरता है' में व्यक्ति का किसी के आधीन होने का भाव, दासता अथवा नौकरी–चाकरी का भाव निहित है। इसके स्थान पर इसका शब्दानुवाद – भ्म मिजबीमे ूंजमत वित ीपउ – करने पर अभिव्यक्त का समस्त सौंदर्य समाप्त हो जाता है। 'उसका अपना पानी है' – वाक्य में 'पानी' व्यक्ति के मान–सम्मान के अर्थ को ध्वनित करता है। इस अर्थ को ग्रहण न कर पाने की स्थिति मे यदि इसका अनुवाद– श्भ्म ीं ीपे वूद ूंजमतष . कर दिया जाए तो सोचिए क्या स्थिति होगी? इसी प्रकार 'दाना–पानी', 'पानी–पानी', 'पानी होना', 'पानी की तरह बहाना', 'पानी लगना', 'हुक्का–पानी', 'घाट–घाट का पानी पीना', 'हवा–पानी' जैसी भाषिक अभिव्यक्तियों में क्रमशः 'खुराक/भोजन', 'शर्मिंदा होना/लजाना', 'नष्ट होना', 'व्यर्थ में लुटाना', 'अनुकूल होना/रास आना', 'सामाजिक बहिष्कार करना', 'विभिन्न स्थानों के भ्रमण का अनुभव होना', 'जलवायु परिवर्तन करना' जैसे अर्थ ध्वनित हो रहे हैं। यदि अनुवादक इन अर्थछवियों के सौंदर्य को पकड़े बिना नीचे दिए गए रूप में अभिधात्मक अनुवाद करता है तो यह उसकी असफलता ही कहलाएगी; जैसे–

दाना पानी seed and water

पानी–पानी seed water and water

Edit with WPS Office

पानी की तरह बहाना seed to be water

पानी लगना to shed like water

हुक्का–पानी to suit water

घाट–घाट का पानी पीना air and water

प्रयोजनमूलक हिंदी

प्रयोजनमूलक हिन्दी के संदर्भ में 'प्रयोजन' विशेषण में 'मूलक' उपसर्ग लगने से 'प्रयोजनमूलक' शब्द बना है। 'प्रयोजन' से तात्पर्य उदेश्य अथवा प्रयुPurpose of use) तथा 'मूलक' उपसर्ग से तात्पर्य आधारि(Baseतअ प्रयोजनमूलक भाषा से तात्पर्य हुआ किसी (विशि्ष्ट उदेश्य के अनुसार प्रयुक्त भाषा। इसी संदर्भ में प्रयोजनमूलक हिन्दी का अर्थ हुआ; ऐसी विशिष्ट हिन्दी जिसका प्रयोग किसी विशिष्ट प्रयोजन (उद्देश्य) के लिए किया जाता है। समान्यत: प्रयोजनमूलक हिन्दी पर विचार करने पर हिन्दी के मुख्यत: तीन रूप सामने आते हैं- बोलचाल की हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी, प्रायोगिक हिन्दी। 'प्रयोजनमूलक अंग्रेजी के (Functional) शब्द का पर्याय है जिसका अर्थ कार्यात्मक, क्रियाशील होता है इससे प्रयोजनमूलक या व्यावहारिक अर्थ स्पष्ट नहीं होता जबकि Applied शब्द से अधिक सार्थक और स्पष्ट होता है। 'प्रयोजनमूलक' हिन्दी को व्यवहारिक, कामकाजी संज्ञाएँ भी दी जाती रही है, इन क्षेत्रों में सामान्यत: आपसी

Edit with WPS Office

बातचीत, दैनदिन व्यवहार, सब्जी-मण्डी, पर्यटन आदि। इसके विपरीत, प्रयोजनमूलक हिन्दी का प्रयुक्ति क्षेत्र प्रशासन परिचालन, प्रौधोगिकी, ज्ञान-विज्ञान आदि। लेकिन इस संदर्भ में श्री रमाप्रसन्न नायक आदि 'व्यवाहारिक हिन्दी' की संज्ञा उचित नहीं मानतें उनके अनुसार 'प्रयोजनमूलक' संबोधन से लगता है इसके अतिरिक्त जो है वह निष्प्रयोजन है।लेकिन ब्रजेश्वर वर्मा जी कहते है कि 'निष्प्रयोजन जैसी कोई चीज नहीं होती बल्कि यह दिवालिया सोच की उपज है। 'प्रयोजनमूलक' व्यावहारिक या सामान्य शब्द नहीं किन्तु एक पारिभाषिक शब्द है। जिसका स्पष्ट और परिभाषित अर्थ " एक ऐसी विशिष्ट भाषिक संरचना से युक्त हिन्दी जिसका प्रयोग किसी विशेष प्रयोजन के लिए ही किया गया हो

प्रयोजनमूलक हिन्दी के विविध रूपों का आधार उनका प्रयोग क्षेत्र होता है। राजभाषा के पद पर आसीन होने से पूर्व हिन्दी सरकारी कामकाज तथा प्रशासन की भाषा नहीं थी। मुसलमान शासकों के समय उर्दू या अरबी और अंग्रेजों के समय अंग्रेजी थी। स्वतंत्रता के बाद भारत के राजभाषा हिन्दी बनी जिसके फलस्वरुप साहित्य लेखन ही नहीं बल्कि भारत में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान और टेक्नोलाजी के प्रस्फुटन और फैलाव के कारण विभिन्न क्षेत्रों के साथ सरकारी कामकाज तथा प्रशासन के नये अनछुए क्षेत्र से

Edit with WPS Office

गुजरना पड़ा जिसको देखते हुए प्रशासन, विधि, दूरसंचार, व्यवसाय, वाणिज्य, खेलकूद, पत्रकारिता आदि सम्बन्धित पारिभाषिक शब्दावली गठन की ओर संतोषप्रद विकास एंव विस्तार किया गया। अत: प्रयोजनमूलक हिन्दी के प्रमुख प्रयुक्तियाँ देखा जा सकता है--

साहित्यिक प्रयुक्तिसाहित्य किसी भी भाषा की अनिवार्य आवश्यकता है। लेखबध्द साहित्यिक भाषा काफी विशिष्टताएँ लिये होती हैं, इसलिए वह लेखकों तथा विशिष्ट पाठकों तक सीमित रहती है। साहित्यिक भाषा में जनसामान्य के जीवन के साथ द राजनिति, समाजशास्त्र तथा संस्कृति का आलेख पाया जाता है। हिन्दी भाषा की साहित्यिक प्रयुक्ति की परम्परा बहुत पुरानी है। हिन्दी साहित्य में अनेक विधाओं तथा उसके विशेषताओं को समेटने की क्षमता है। यह भारतीय तथा यूरोपीय भाषाओं की शब्दावली ग्रहण कर समस्त युगचेतना अभिव्यक्ति प्रदान करने की कोशिश की है। अत: हिन्दी भाषा की साहित्यिक अत्यधिक सजग और सर्वसमावेशी है।

वाणिज्य प्रयुक्ति- हिन्दी भाषा की दूसरी महत्वपूर्ण प्रयोजनमूलक प्रयुक्ति 'वाणिज्यिक' है। औधोगिक क्रांति के बाद इसकी व्याप्ति मात्र राष्टीय ही नहीं अंतर्राष्टीय तथा बहुआगामी है जिसके अन्तर्गत व्यापार, वाणिज्य, व्यवसाय, परिवहन, बीमा, बैंकिग तथा

Edit with WPS Office

निर्यात-आयात आदि क्षेत्रों का समावेश होता जिसमें निश्चित शब्दावली और निश्चित अथ में प्रयुक्त होता है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त भाषा, साहित्यिक वाक्य रचना से काफी भिन्न होता है जैसे, सोने में उछाल, चाँदी मंदा, तेल की धार ऊँची आदि। अत: हिन्दी भाषा की वाणिज्यिक प्रयुक्रित का क्षेत्र काफी विस्तृत और साथ ही लोकप्रिय है।

कार्यालयी प्रयुक्ति- हिन्दी भाषा की अत्यन्त आधुनिक एवं सर्वोपयोगी प्रयुक्ति में 'कार्यालयी' (Official) प्रयुक्ति आता है। जिसका प्रयोग सरकारी, अध्द-सरकारी और गैर-सरकारी कार्यालयों में काम-काज के रूप में प्रयोग होता है। प्रशासनिक भाषा और बोलचाल की भाषा में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। कार्यालयी भाषा की अपनी विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली, पद-रचना तथा आदि होते है। कार्यालयीन हिन्दी में काम-काज के रूप में मसोदा लेखन, टिप्पणी लेखन, पत्राचार, संक्षेपण, प्रतिवेदन, अनुवाद आदि में प्रयुक्त होता है।

विज्ञापन एवं जनसंचार प्रयुक्ति- हिन्दी की प्रयोजनमूलक प्रयुक्ति के रूप में विज्ञापन और जन-संचार की भाषा तेजी से उभरकर सामने आयी है। आकर्षक वाक्य-विन्यास, शब्दों का उचित चयन तथा वैशिष्टयपूर्ण प्रवहमय भाषिक संरचना विज्ञापन भाषा प्रयुक्ति के मुख्य तत्व आते है। विज्ञापन की भाषा चूँकि व्यापार, व्यवसाय, तथा वाणिज्य से

Edit with WPS Office

सम्बन्ध रखती है; अत: उसमें आकर्षक, मोहक, भाषा शैली, श्रव्यता, संक्षिप्तता आदि गुणों का होना नितांत आवश्यक है। वर्तमान युग में हिन्दी के विज्ञापन भाषा का रूप जन संचार के माध्यमों (समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, रेडियों, दूरदर्शन, सिनेमा) आदि आते है। अत: किसी भी देश की जन-संचार उस देश की सशक्त प्रगतिशीलता को दर्शाता है।

विधि एवं कानूनी भाषा प्रयुक्ति- कानूनी भाषा का प्रयुक्ति का सीधा सम्बन्ध राज-भाषा, अनुवाद-प्रक्रिया तथा तकनीकी शब्दावली से माना जाता है। कानूनी प्रक्रिया एवं अदालतों में तकनीकी शब्दावली होने के कारण जनसामान्य के लिए जटिल, नीरस तथा उबारू प्रतित होता था इसी को देखते हुए विधि एवं कानून की क्षेत्र में संसकृत, हिन्दी, अन्य भारतीय भाषाओं के साथ अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों को ग्रहण किया गया और इस प्रकार कानून एवं विधि की भाषा में प्रयोग होने वाले तकनीकी शब्दावली, विशिष्ट पद विन्यास, लम्बे संयुक्त वाक्य-रचना को सुचारू रूप से चलाने प्रतिष्ठित हुआ।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा प्रयुक्ति- वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी से तात्पर्य है, हिन्दी का वह रूप जो विज्ञान और तकनीकी शब्दावली से मुख्यात: सम्बन्ध रखता है। राजभाषा प्रयोग सम्बन्धी राष्ट्रपति ने 27 अप्रैल, 1960 के आदेशानुसार भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अधीन वैज्ञानिक और तकनिकी शब्दावली आयोग की स्थापना

Edit with WPS Office

1961 में की गई। विज्ञान एंव टेक्नोलाजी की भाषा सामान्य व्यवहार की भाषा से सर्वथा भिन्न होती है, अत: वैज्ञानिक एवं तकनिकी विशिष्टता (एकरूपता) में ढ़ालने के लिए हिन्दी, संस्कृत, के साथ अन्तर्राष्टीय शब्दावली का प्रयोग किया गया। आज विज्ञान और टेक्नोलाजी के क्षेत्रों में अनुप्रयुक्त हो रहा है, विज्ञान, गणित,विधि, अंतरिक्ष, दूरसंचार, टेक्नोलाजी आदि।

प्रयोजनमूलक हिन्दी की संरचना, संचेतना एवं संकल्पना के विश्लेषण से उसमें अन्तर्निहित कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ उद्घाटित होकर सामने आती है, जिनमें प्रमुख हैं--

(अ) **<u>अनुप्रयुक्तता</u>**:- प्रयोजनमूलक हिन्दी का सबसे बड़ा गुण या विशेषता है, उसकी अनुप्रयुक्तता(Appliedness) अर्थात प्रयोजनीयता। जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में हिन्दी का विशिष्ट रूप विशिष्ट प्रयोजन के अनुसार अनुप्रयुक्त होता है। विश्व भर में बहुत सारी भाषाएँ ऐसी हैं जिनका अस्तित्व व्यवहार तथा साहित्य के क्षेत्र से ही बना हुआ है। प्रशासन, प्रचालन तथा विज्ञान-प्रौधोगिकी के क्षेत्रों को अभिव्यक्त करने की उनकी क्षमता उचित मात्रा में विकसित नहीं हो पाती है। अर्थात उन भाषाओं का अनुप्रयुक्त पक्ष

Edit with WPS Office

अत्यधिक कमजोर होता है। ऐसी भाषाओं के नवीकरण तथा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया कालान्तर में लगभग समाप्त-सी हो जाती है। फलत: उनका बहुमुखी सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं हो पाता। हिन्दी के प्रयोजनमूलक रूप का सर्वकष विकास इसलिए सम्भव हो सका है कि उसमें अनुप्रयुक्तता की महत्तम विशेषता विधमान रही है। अनुप्रयुक्तता की दृष्टि से हिन्दी के प्रयोजनमूलक रूपों में राजभाषा, कार्यालयी, वाणिज्यिक, व्यावसायिक, वैज्ञानिक तथा प्रौधोगिकी क्षेत्रों में प्रयुक्त हिन्दी का समावेश होता है।

(आ**) वैज्ञानिकता**:- प्रयोजनमूलक हिन्दी की दूसरी अहम् विशेषता है उसकी वैज्ञानिकता। किसी भी विषय के तर्क-संगत, कार्य-कारण भाव से युक्त विशिष्ट ज्ञान पर आश्रित प्रवृति को वैज्ञानिक कहा जा सकता है। इस दृष्टि से प्रयोजनमूलक हिन्दी सम्बन्धित विषय-वस्तु को विशिष्ट तर्क एवं कार्य-कारण सम्बन्धों पर आश्रित नियमों के अनुसार विश्लेषित कर रूपायित करती है। प्रयोजनमूलक हिन्दी की अध्ययन तथा विश्लेषण की प्रक्रिया विज्ञान की विश्लेषण एवं अध्ययन प्रक्रिया से भी अत्यधिक

Edit with WPS Office

निकटता रखती है जिन्हें विज्ञान के नियमों के अनुसार सार्वकालिक तथा सार्वभौमिक कहा जा सकता है। इसी के साथ-साथ प्रयोजनमूलक हिन्दी के सिध्दान्तों एवं प्रयुक्ति में कार्य-कारण भाव की नित्यता भी दृष्टिगत होती है जिसे किसी भी विज्ञान का सबसे प्रमुख आधार माना जाता है। विज्ञान की भाषा तथा शब्दावली के अनुसार ही प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषा तथा शब्दावली में स्पष्टता, तटस्थता, विषय-निष्ठता तथा तर्क-संगतता विधमान है। अत: स्पष्ट है कि प्रयोजनमूलक हिन्दी अपनी अन्तर्वृत्ति, प्रवृति, प्रयुक्ति, भाषिक संरचना और विषय विश्लेषण आदि सभी स्तरों पर वैज्ञानिकता से युक्त है।

(इ) **सामाजिकता**:- हिन्दी की प्रयोजनमूलकता मूलत: सामाजिक गुण या विशेषता है। सामाजिकता का सम्बन्ध मानविकी से है। अत: प्रकारान्तर से प्रयोजनमूलक हिन्दी का अभिन्न सम्बन्ध मानविकी से माना जा सकता है। प्रयोजनमूलक हिन्दी के निर्माण एवं परिचालन का सम्बन्ध समाज तथा उससे जुड़ी विभिन्न ज्ञान-शाखाओं से है। सामाजिक परिस्थिति, सामाजिक भूमिका तथा सामाजिक स्तर के अनुरूप प्रयोजनमूलक हिन्दी के

Edit with WPS Office

प्रयुक्ति-स्तर तथा भाषा-रूप प्रयोग में आते हैं। इतना ही नहीं, सामाजिक विज्ञान की तरह प्रयोजनमूलक हिन्दी में अन्तर्निहित सिध्दान्त और प्रयुक्त-ज्ञान मनुष्य के सामाजिक प्रयुक्तिपरक क्रियाकलापों का कार्य-कारण सम्बन्ध से तर्क-निष्ठ अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है। अत: प्रयोजनमूलक हिन्दी में सामाजिकता के तत्व एवं विशिष्टता अनिवार्यत: विधमान देखे जा सकते हैं।

(ई) **भाषिक विशिष्टता**:- यह वह विशेषता है जो प्रयोजनमूलक हिन्दी की स्वतन्त्र सत्ता और महत्ता को रूपायित कर उसे सामान्य या साहित्यिक हिन्दी से अलग करती है। अपनी शब्द-ग्रहण करने की अद्भुत शक्ति के कारण प्रयोजनमूलक हिन्दी ने अनेक भारतीय तथा पश्चिमी भाषाओं के शब्द-भण्डार को आवश्यकतानुसार ग्रहण कर अपनी शब्द-सम्पदा को वृध्दिगत किया है। प्रयोजनमूलक हिन्दी में तकनीकी एवं परिभाषिक शब्दावली का प्रयोग अनिवार्य रूप से विधमान रहता है जो उसकी भाषिक विशिष्टता को रेखांकित करता है। प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषा सटिक, सुस्पष्ट, गम्भीर, वाच्यार्थ प्रधान, सरल तथा एकार्थक होती है और इसमें कहावतें, मुहावरे, अलंकार तथा उक्तियाँ

Edit with WPS Office

आदि का बिल्कुल प्रयोग नहीं किया जाता है। इसकी भाषा-संरचना में तटस्थता, स्पष्टता तथा निर्वैयक्तिकता स्पष्ट रूप से विधमान रहती है और कर्मवाच्य प्रयोग का बाहुल्य दिखाई देता है। इसी प्रकार, प्रयोजनमूलक हिन्दी में जो भाषिक विशिष्टता तथा विशिष्ट रचनाधर्मिता दृष्टिगत होती है, वह बोलचाल की हिन्दी तथा साहित्यिक हिन्दी में दिखाई नहीं देती। यही उसकी विशेषता है।

हिंदी भाषा का साहित्य में योगदान

हिन्दी साहित्य पर अगर समुचित परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य का इतिहास अत्यन्त विस्तृत व प्राचीन है। सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ० हरदेव बाहरी के शब्दों में, हिन्दी साहित्य का इतिहास वस्तुतः वैदिक काल से आरम्भ होता है। यह कहना ही ठीक होगा कि वैदिक भाषा ही हिन्दी है। इस भाषा का दुर्भाग्य रहा है कि युग-युग में इसका नाम

Edit with WPS Office

परिवर्तित होता रहा है। कभी 'वैदिक', कभी 'संस्कृत', कभी 'प्राकृत', कभी'अपभ्रंश' और अब - हिन्दी। आलोचक कह सकते हैं कि 'वैदिक संस्कृत' और 'हिन्दी' में तो जमीन-आसमान का अन्तर है। पर ध्यान देने योग्य है कि हिब्रू, रूसी, चीनी, जर्मन और तमिल आदि जिन भाषाओं को 'बहुत पुरानी' बताया जाता है, उनके भी प्राचीन और वर्तमान रूपों में जमीन-आसमान का अन्तर है; पर लोगों ने उन भाषाओं के नाम नहीं बदले और उनके परिवर्तित स्वरूपों को 'प्राचीन', 'मध्यकालीन', 'आधुनिक' आदि कहा गया, जबकि 'हिन्दी' के सन्दर्भ में प्रत्येक युग की भाषा का नया नाम रखा जाता रहा।

हिन्दी भाषा के उद्भव और विकास के सम्बन्ध में प्रचलित धारणाओं पर विचार करते समय हमारे सामने हिन्दी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न दसवीं शताब्दी के आसपास की प्राकृत भाषा तथा अपभ्रंश भाषाओं की ओर जाता है। अपभ्रंश शब्द की व्युत्पत्ति और जैन रचनाकारों की अपभ्रंश कृतियों का हिन्दी से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जो तर्क और प्रमाण हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में प्रस्तुत किये गये हैं उन पर विचार करना भी आवश्यक है। सामान्यतः प्राकृत की अन्तिम अपभ्रंश है। उस समय अपभ्रंश के कई रूप थे और उनमें सातवीं-आठवीं शताब्दी से ही पद्

तथा ऐसी भी मान्यता हैं कि बाद में हिंदी की ओर की नए अपभ्रंश भी साहित्य में शामिल हो गए होंगे।

साहित्य की दृष्टि से पद्यबद्ध जो रचनाएँ मिलती हैं वे दोहा रूप में ही हैं और उनके विषय, धर्म, नीति,

Edit with WPS Office

उपदेश आदि प्रमुख हैं। राजाश्रित कवि और चारण नीति, शृंगार, शौर्य, पराक्रम आदि

हैं। राजाश्रित कवि और चारण नीति, शृंगार, शौर्य, पराक्रम आ अपनी साहित्य-रुचि का परिचय दिया करते थे। यह रचना-परम्परा आगे चलकर शौरसेनी अपभ्रंश या 'प्राकृताभास हिन्दी' में कई वर्षों तक चलती रही। पुरानी अपभ्रंश भाषा और बोलचाल की देशी भाषा का प्रयोग निरन्तर बढ़ता गया। इस भाषा को विद्यापति ने देशी किन्तु यह निर्णय करना सरल नहीं है कि हिन्दी शब्द का प्रयोग इस भाषा के लिए कब और किस देश में प्रारम्भ हुआ

मॉनिन के अनुसार भाषा—विज्ञान यह बताता है कि अनुवाद की प्रक्रिया एक द्वंद्वात्मक प्रक्रिया होती है। अनुवाद एक स्पष्ट स्थितियों और स्पष्ट संदेशों से शुरू होता है और एक प्राथमिक सार्वभौमिकता को उजागर करता है, लेकिन इसमें भाषा सन्निहित होती हैं और यह वैयक्तिक संदेशों के साथ नई संदेश से भी हमें वाकिफ करते हैं जिसकी आधुनिक समाज को आवश्यकता हैं। इसी के साथ गथ़ूी हई होती हे, इसलिए इनका स्पष्टीकरण आवश्यक होता है।'' मॉनिन आगे अपनी व्याख्याओं में इस धारणा पर बल देते हैं कि अनुवाद की प्रक्रिया न तो कभी समाप्त होती है और न ही यह कहना उचित है कि किसी भी रचना का अनुवाद संभव हो सकता है। हालाँकि यह एक तर्क—वितर्क का विस्तृत विशय है, जिसकी हमने अपने अनुवाद वाले पाठ में विस्तार से चर्चा की है।

हिन्दी साहित्य के मुख्य इतिहासकार और उनके ग्रन्थ निम्नलिखित हैं

Edit with WPS Office

1. **गार्सा द तासी** : इस्तवार द ला लितेरात्यूर ऐंदुई ऐंदुस्तानी (फ्रेंच भाषा में; फ्रेंच विद्वान, हिन्दी साहित्य के पहले इतिहासकार),(1839)

2. **मौलवी करीमुद्दीन** : तजकिरा-ऐ-शुअराई, (1848)

3. **शिवसिंह सेंगर** : शिव सिंह सरोज,(1883)

4. **जार्ज ग्रियर्सन** : द मॉडर्न वर्नेक्यूलर लिट्रैचर ऑफ़ हिन्दोस्तान, (1888)

5. **मिश्र बंधु** : मिश्र बन्धु विनोद (चार भागों में) भाग 1,2 और 3-(1913- 1914 में) भाग 4 (1934 में)

6. **एडविन ग्रीव्स** : ए स्कैच ऑफ़ हिन्दी लिट्रैचर (1917)

7. **एफ. ई. के. महोदय** : ए हिस्ट्री ऑफ़ हिन्दी लिट्रैचर (1920)

8. **रामचंद्र शुक्ल** : हिन्दी साहित्य का इतिहास (1929)

9. **हजारी प्रसाद द्विवेदी** : हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940); हिन्दी साहित्य का आदिकाल

Edit with WPS Office

(1952); हिन्दी साहित्य :उद्भव और विकास (1955)

10. **रामकुमार वर्मा** : हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (1938)

11. **डॉ० धीरेन्द्र वर्मा** : हिन्दी साहित्य (तीन खण्डों में)

12 हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास (सोलह खण्डों में) - 1957 से 1984 ई० तक।

13. **डॉ० नगेन्द्र** : हिन्दी साहित्य का इतिहास (1973); हिन्दी वाङ्मय 20वीं शती

14. **रामस्वरूप चतुर्वेदी** : हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1986

15. **बच्चन सिंह** : हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली (1996)

16. डा० मोहन अवस्थी : हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास

17. **बाबू गुलाब राय** : हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास

Edit with WPS Office

18.**राजेंद्र प्रसाद सिंह**: हिंदी साहित्य का सबाल्टर्न इतिहास

बीसवीं शताब्दी

इस कालावधि की सबसे महत्वपूर्ण घटनाएँ दो हैं - एक तो सामान्य काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली की स्वीकृति और दूसरे हिन्दी गद्य का नियमन और परिमार्जन। इस कार्य में सर्वाधिक सशक्त योग सरस्वती सम्पादक महावीरप्रसाद द्विवेदी का था। द्विवेदी जी और उनके सहकर्मियों ने हिन्दी गद्य की अभिव्यक्तिक्षमता को विकसित किया। निबन्ध के क्षेत्र में द्विवेदी जी के अतिरिक्त बालमुकुन्द, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, पूर्णसिंह, पद्मसिंह शर्मा जैसे एक से एक सावधान, सशक्त और जीवन्त गद्यशैलीकार सामने आए। उपन्यास अनेक लिखे गए पर उसकी यथार्थवादी परम्परा का उल्लेखनीय विकास न हो सका। यथार्थपरक आधुनिक कहानियाँ इसी काल में जनमी और विकासमान हुई। गुलेरी, कौशिक आदि के अतिरिक्त प्रेमचन्द और प्रसाद की भी आरम्भिक कहानियाँ इसी समय प्रकाश में आई। नाटक का क्षेत्र अवश्य सूना सा रहा। इस समय के सबसे प्रभावशाली समीक्षक द्विवेदी जी थे जिनकी संशोधनवादी और मर्यादानिष्ठ आलोचना ने अनेक समकालीन साहित्य को पर्याप्त प्रभावित किया। मिश्रबन्धु, कृष्णबिहारी मिश्र और पद्मसिंह शर्मा इस समय के अन्य समीक्षक हैं पर कुल मिलाकर इस समय की समीक्षा बाह्यपक्षप्रधान ही रही।

Edit with WPS Office

सुधारवादी आदर्शों से प्रेरित अयोध्यासिंह उपाध्याय ने अपने "प्रियप्रवास' में राधा का लोकसेविका रूप प्रस्तुत किया और खड़ीबोली के विभिन्न रूपों के प्रयोग में निपुणता भी प्रदर्शित की। मैथिलीशरण गुप्त ने "भारत भारती' में राष्ट्रीयता और समाजसुधार का स्वर ऊँचा किया और "साकेत' में उर्मिला की प्रतिष्ठा की। इस समय के अन्य कवि द्विवेदी जी, श्रीधर पाठक, बालमुकुंद गुप्त, नाथूराम शर्मा 'शंकर', गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' आदि हैं। ब्रजभाषा काव्यपरंपरा के प्रतिनिधि रत्नाकर और सत्यनारायण कविरत्न हैं। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा के परिमार्जन और सामयिक परिवेश के अनुरूप रचना का कार्य सम्पन्न हुआ। नए काव्य का अधिकांश विचारपरक और वर्णनात्मक है।

सन् 1920- 40के दो दशकों में आधुनिक साहित्य के अन्तर्गत वैचारिक और कलात्मक प्रवृत्तियों का अनेक रूप उत्कर्ष दिखाई पड़ा। सर्वाधिक लोकप्रियता उपन्यास और कहानी को मिली। कथासाहित्य में घटनावैचित्य की जगह जीते जागते स्मरणीय चरित्रों की सृष्टि हुई। निम्न और मध्यवर्गीय समाज के यथार्थपरक चित्र व्यापक रूप में प्रस्तुत किए गए। वर्णन की सजीव शैलियों का विकास हुआ। इस समय के सर्वप्रमुख कथाकार प्रेमचन्द हैं। वृन्दावनलाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यास भी उल्लेख्य है। हिन्दी नाटक इस समय जयशंकर प्रसाद के साथ सृजन के नवीन स्तर पर आरोहण करता है। उनके रोमांटिक ऐतिहासिक नाटक अपनी जीवन्त चारित्र्यसृष्टि, नाटकीय संघर्षों

Edit with WPS Office

की योजना और संवेदनीयता के कारण विशेष महत्व के अधिकारी हुए। कई अन्य नाटककार भी सक्रिय दिखाई पड़े। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में रामचन्द्र शुक्ल ने सूर, तुलसी और जायसी की सूक्ष्म भावस्थितियों और कलात्मक विशेषताओं का मार्मिक उद्घाटन किया और साहित्य के सामाजिक मूल्यों पर बल दिया। अन्य आलोचक है श्री नन्ददुलारे वाजपेयी, डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी।

यह युग काव्य के क्षेत्र में यह छायावाद के विकास का युग है। पूर्ववर्ती काव्य वस्तुनिष्ठ था, छायावादी काव्य भावनिष्ठ है। इसमें व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्राधान्य है। स्थूल वर्णन विवरण के स्थान पर छायावादी काव्य में व्यक्ति की स्वच्छन्द भावनाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई। स्थूल तथ्य और वस्तु की अपेक्षा बिम्बविधायक कल्पना छायावादियों को अधिक प्रिय है। उनकी सौंदर्यचेतना विशेष विकसित है। प्रकृतिसौंदर्य ने उन्हें विशेष आकृष्ट किया। वैयक्तिक संवेगों की प्रमुखता के कारण छायावादी काव्य मूलत: प्रगीतात्मक है। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा की अभिव्यक्तिक्षमता का अपूर्व विकास हुआ। जयशंकर प्रसाद, माखनलाल, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला', महादेवी, नवीन और दिनकर छायावाद के उत्कृष्ट कवि हैं।

सन् 1940के बाद छायावाद की संवेगनिष्ठ, सौंदर्यमूलक और कल्पनाप्रिय व्यक्तिवाद प्रवृत्तियों के विरोध में प्रगतिवाद का संघबद्ध आन्दोलन चला जिसकी दृष्टि समाजबद्ध, यथार्थवादी और उपयोगितावादी है। सामाजिक वैषम्य और वर्गसंघर्ष का भाव इसमें विशेष मुखर हुआ। इसने साहित्य

Edit with WPS Office

को सामाजिक क्रांति के अस्त्र के रूप में ग्रहण किया। अपनी उपयोगितावादी दृष्टि की सीमाओं के कारण प्रगतिवादी साहित्य, विशेषत: कविता में कलात्मक उत्कर्ष की सम्भावनाएँ अधिक नहीं थीं, फिर भी उसने साहित्य के सामाजिक पक्ष पर बल देकर एक नई चेतना जाग्रत की।

प्रगतिवादी आंदोलन के आरम्भ के कुछ ही बाद नए मनोविज्ञान या मनोविश्लेषणशास्त्र से प्रभावित एक और व्यक्तिवादी प्रवृत्ति साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय हुई थी जिसे सन् 1943के बाद प्रयोगवाद नाम दिया गया। इसी का संशोधित रूप वर्तमानकालीन नई कविता और नई कहानियाँ हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्वितीय महायुद्ध और उसके उत्तरकालीन साहित्य में जीवन की विभीषिका, कुरूपता और असंगतियों के प्रति असन्तोष तथा क्षोभ ने कुछ आगे पीछे दो प्रकार की प्रवृत्तियों को जन्म दिया। एक का नाम प्रगतिवाद है, जो मार्क्स के भौतिकवादी जीवनदर्शन से प्रेरणा लेकर चला; दूसरा प्रयोगवाद है, जिसने परंपरागत आदर्शों और संस्थाओं के प्रति अपने अंसतोष की तीव्र प्रतिक्रियाओं को साहित्य के नवीन रूपगत प्रयोगों के माध्यम से व्यक्त किया। इसपर नए मनोविज्ञान का गहरा प्रभाव पड़ा।

प्रगतिवाद से प्रभावित कथाकारों में यशपाल, उपेंद्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर और नागार्जुन आदि विशिष्ट हैं। आलोचकों में रामविलास शर्मा,नामवर सिंह, विजयदेव नारायण साही प्रमुख हैं। कवियों में

Edit with WPS Office

केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, रांगेय राघव, शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। निबन्ध विधा में इस दौर में आछार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्या निवास मिश्र और कुबेरनाथ राय ने विशेष ख्याति अर्जित की।

नए मनोविज्ञान से प्रभावित प्रयोगों के लिए सचेष्ट कथाकारों में अज्ञेय प्रमुख हैं। मनोविज्ञान से गंभीर रूप में प्रभावित इलाचंद्र जोशी और जैनेंद्र हैं। इन लेखकों ने व्यक्तिमन के अवचेतन का उद्घाटन कर नया नैतिक बोध जगाने का प्रयत्न किया। जैनेन्द्र और अज्ञेय ने कथा के परम्परागत ढाँचे को तोड़कर शैलीशिल्प सम्बन्धी नए प्रयोग किए। परवर्ती लेखकों और कवियों में वैयक्तिक प्रतिक्रियाएँ अधिक प्रखर हुईं। समकालीन परिवेश से वे पूर्णत: संसक्त हैं। उन्होंने समाज और साहित्य की मान्यताओं पर गहरा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। व्यक्तिजीवन की लाचारी, कुण्ठा, आक्रोश आदि व्यक्त करने के साथ ही वे वैयक्तिक स्तर पर नए जीवनमूल्यों के अन्वेषण में लगे हुए हैं। उनकी रचनाओं में एक ओर सार्वभौम संत्रास और विभीषिका की छटपटाहट है तो दूसरी ओर व्यक्ति के अस्तित्व की अनिवार्यता और जीवन की संभावनाओं को रेखांकित करने का उपक्रम भी। हमारा समकालीन साहित्य आत्यंतिक व्यक्तिवाद से ग्रस्त है और यह उसकी सीमा है। पर उसका सबसे बड़ा बल उसकी जीवनमयता है जिसमें भविष्य की सशक्त संभावनाएँ निहित हैं।

<u>हिन्दी एवं उसके साहित्य का इतिहास</u>

Edit with WPS Office

650 ईसा पूर्व - संस्कृत का वैदिक संस्कृत के बाद का क्रमबद्ध विकास।

500 ईसा पूर्व - बौद्ध तथा जैन की भाषा प्राकृत का विकास (पूर्वी भारत)।

400 ईसा पूर्व - पाणिनि ने संस्कृत व्याकरण लिखा (पश्चिमी भारत)। वैदिक संस्कृत से पाणिनि की काव्य संस्कृत का मानकीकरण।

ब्राह्मी लिपि का विकास

पाँचवीं सदी ईसा पूर्व से पहले - भारत में ब्राह्मी लिपि का विकास।

पाँचवीं सदी ई०पू० से 350ई० - ब्राह्मी लिपि का ज्ञात प्रयोग काल।

320 ई० (के आसपास) - ब्राह्मी लिपि से गुप्त लिपि का विकास।

छठी सदी ईस्वी - सिद्धमात्रिका लिपि का गुप्त लिपि की पश्चिमी शाखा की पूर्वी उपशाखा से विकास। इसे न्यूनकोणीय लिपि भी कहा गया है।

अपभ्रंश तथा आदि-हिन्दी का विकास

प्रथम सदी ई०पू०/5वीं सदी ई० - कालिदास ने 'विक्रमोर्वशीयम्' में अपभ्रंश का प्रयोग किया।

Edit with WPS Office

550ई० - वल्लभी के दर्शन में अपभ्रंश का प्रयोग।

769 - सिद्ध सरहपाद (जिन्हें कई लोग हिन्दी का पहला कवि मानते हैं) ने 'दोहाकोश' लिखा।

779 - उद्योतन सूरि की 'कुवलयमाला' में अपभ्रंश का प्रयोग।

800 - संस्कृत में बहुत सी रचनाएँ लिखी गयीं।

934 - देवसेन की 'सावयधम्म दोहा' (श्रावकधर्म दोहा या श्रावकाचार) {कुछ लोग इसे भी हिन्दी की पहली पुस्तक मानते हैं

1100 - आधुनिक देवनागरी लिपि का प्रथम स्वरूप।

1145-1229 - हेमचंद्राचार्य ने सिद्ध हेम शब्दानुशासन नामक अपभ्रंश-व्याकरण की रचना की।

अपभ्रंश का अस्त तथा आधुनिक हिन्दी का विकास

1184 ई० - शालिभद्र सूरि रचित भरतेश्वर बाहुबलि रास 205 छन्दों का आकार में छोटा परन्तु शब्द-चयन एवं भाव सभी दृष्टियों से अत्यन्त उत्तम काव्य है।[8] पुष्ट तर्कों से यही हिंदी की पहली रचना सिद्ध होती है।[9]

1253-1325 - अमीर ख़ुसरो की पहेलियों तथा मुकरियों में "हिन्दवी" शब्द का सर्वप्रथम उपयोग।

1370 - "हंसाउली" (हंसावली) के कवि असाइत ने प्रेम कथाओं की शुरुआत की।

Edit with WPS Office

1399-1512 - कबीर की रचनाओं ने निर्गुण भक्ति की नींव रखी।[10]

1400-1479 - अपभ्रंश के आखिरी महान् कवि रइधू।

1450 - रामानन्द के साथ "सगुण भक्ति" की शुरुआत।

1580 - शुरुआती दक्खिनी का कार्य "कालमितुल हकायत"—बुरहानुद्दीन जानम द्वारा।

1585 - नाभादास ने "भक्तमाल" लिखी।

1601 - बनारसीदास ने हिन्दी की पहली आत्मकथा "अर्ध कथानक" लिखी।

1604 - गुरु अर्जुन देव ने कई कवियों की रचनाओं का संकलन "आदि ग्रन्थ" निकाला।

1532-1623 - गोस्वामी तुलसीदास ने "रामचरित मानस" की रचना की।

1623 - जटमल ने "गोरा बादल री बात" (कुछ लोगों के विचार से खड़ी बोली की पहली रचना) लिखी।

1643 - आचार्य केशव दास ने "रीति" के द्वारा काव्य की शुरुआत की।

1645 - उर्दू का आरम्भ

आधुनिक हिन्दी

1796 - देवनागरी रचनाओं की शुरुआती छपाई।

Edit with WPS Office

1826 - "उदन्त मार्तण्ड" हिन्दी का पहला साप्ताहिक।

1837 - ओम् जय जगदीश के रचयिता श्रद्धाराम फुल्लौरी का जन्म।

1868 - राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' का लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन – फारसी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के लिए पहला प्रयास राजा शिवप्रसाद का उनके लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन कोर्ट कैरेक्टर इन द अपर प्रोविन्स ऑफ़ इण्डिया से आरम्भ हुआ।

1877 - अयोध्या प्रसाद खत्री का हिन्दी व्याकरण, (बिहार बन्धु प्रेस)

1881 - वर्ष 1881 ई. तक आते–आते उत्तर प्रदेश के पड़ोसी प्रान्तों बिहार, मध्य प्रदेश में नागरी लिपि और हिन्दी प्रयोग की सरकारी आज्ञा जारी हो गई तो उत्तर प्रदेश में नागरी आन्दोलन को बड़ा नैतिक प्रोत्साहन मिला।

1893 - काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना

1 मई 1910 - नागरी प्रचारिणी सभा के तत्वावधान में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई।

1950 - हिन्दी भारत की राजभाषा के रूप में स्थापित।

10-14 जनवरी 1975 - नागपुर में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित

दिसम्बर, 1993 - मॉरीशस में चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन तथा उसके बाद विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना

Edit with WPS Office

1997 - वर्धा में महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना का अधिनियम संसद द्वारा पारित

2000 - आधुनिक हिन्दी का अनतरराष्ट्रीय विकास

2020 - हिन्दी में काव्य एवं ब्लॉ का

लेखक द्वारा प्रयुक्त शब्द	द्विवेदी जी द्वारा संशोधित रूप
जावै	जाय
करैगा	करेगा
उन्हें	उन्हें
चाहिये	चाहिए
हुवा	हुआ
बिचारे	बेचारे
संदेशा	संदेश
समाधी	समाधि
पैहले	पहले
गयी	गई
गंधारी	गांधारी
प्रगट	प्रकट
चुनाओ	चुनाव
क्यूंकि	क्योंकि
दुनिया	दुनिया
नैन	नयन
बादर	बादल
सिंघासन	सिंहासन
जोत	ज्योति
कुच्छ	कुछ
कोठड़ी	कोठरी

Edit with WPS Office

मानवता का रक्षा स्रोत भाषा

भाषा मानव और समाज

भाषा की उत्पत्ति से आशय उस काल से है जब मानव ने बोलना आरम्भ किया और 'भाषा' सीखना आरम्भ किया। इस विषय में बहुत सी संकल्पनाएं हैं जो अधिकांशतः अनुमान पर आधारित हैं। मानव के इतिहास में यह काल इतना पहले आरम्भ हुआ कि इसके विकास से सम्बन्धित कोई भी संकेत मिलने असम्भव हैं।

भाषा की उत्पत्ति का सम्बंध इस बात से हैं कि मानव ने सर्वप्रथम किस काल में अपने मुख से निसृत होनेवाली ध्वनियों को वस्तुओं-पदार्थों, भावों से जोड़ा। इतिहास के किस काल में मानव ने सामूहिक स्तर पर यह निश्चय किया कि किस शब्द का क्या अर्थ होगा।

'भाषा की उत्पत्ति' का प्रश्न भाषा-विज्ञान की विचार-सीमा में नहीं आता। विज्ञान जो पदार्थ का तात्त्विक विश्लेषण करके यह बता देगा कि यह भाषा किस वर्ग की भाषा है। उसके गुण-दोषों की चर्चा कर देगा पर उसके जन्म का प्रश्न दर्शनशास्त्र की सीमा में जाता है। आजकल के भाषा वैज्ञानिक भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को भाषाविज्ञान की

Edit with WPS Office

सीमा में नहीं मानते।

भाषा की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों ने दो प्रकार के विचार-मार्ग अपनाए हैं जिन्हें प्रत्यक्ष मार्ग और परोक्ष मार्ग कहा जाता है-

(१) **प्रत्यक्ष मार्ग** (जिसमें भाषा की आदिम अवस्था से चल कर उसकी वर्तमान तक विकसित दशा का विचार किया जाता है।

(२) **परोक्ष मार्ग** भाषा की आज की विकसित दशा से पीछे की ओर चलते हुए उसकी आदिम अवस्था तक पहुंचने का प्रयास किया जाता है।

परोक्ष मार्ग की त्रुटि और व्यर्थता

भाषा का विकास विभिन्न कालों और परिस्थितियों में होता हुआ आज द्रुत गति से हो रहा है अतः उसके वर्तमान रूप से पीछे के इतिहास को जानने में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ आ सकती हैं। इस मार्ग की अव्यावहारिकता को देखकर किसी प्रकार का

Edit with WPS Office

सिद्धान्त नहीं बनाया जा सकता। बालक के भाषा सीखने का प्रयास और समाज द्वारा भाषा का विकास दोनों पूरी तरह भिन्न बातें हैं। इसी कारण कुछ विद्वानों ने परोक्ष मार्ग को व्यर्थ घोषित कर दिया है।

प्रत्यक्ष मार्ग

भाषा की उत्पत्ति के प्रमुख सिद्धान्त: भाषा के विकास या इतिहास और उसकी उत्पत्ति को लेकर निम्नलिखित सिद्धान्त प्रचलित हैं:

दैवी उत्पत्ति-सिद्धान्त

भाषाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सबसे प्राचीन मत यह है कि संसार की अनेकानेक वस्तुओं की रचना जहाँ भगवान ने की है तो सब भाषाएँ भी भगवान की ही बनाई हुई हैं। कुछ लोग तो आज भी इसी मत को मानते हैं।

Edit with WPS Office

संस्कृत को 'देवभाषा' कहने में इसी का संकेत मिलता है। इसी प्रकार पाणिनी के व्याकरण 'अष्टाध्यायी' के14 मूल सूत्र महेश्वर जी अर्थात,शंकर जी के डमरू से निकले माने जाते हैं। बौद्ध लोग 'पालि' को भी इसी प्रकार मूल भाषा मानते रहे हैं उनका विश्वास है कि भाषा अनादि काल से चली आ रही है। जैन लोग इससे भी आगे बढ़ गए हैं। उनके अनुसार अर्धमागधी केवल मनुष्यों की ही नही अपितु देव, पशु-पक्षी सभी की भाषा है। हिब्रू भाषा के कुछ विद्वानों ने बहुत-सी भाषाओं के वे शब्द इकट्ठे किए जो हिब्रू से मिलते जुलते थे और इस आधार पर यह सिद्ध किया कि हिब्रू ही संसार की सभी भाषाओं की जननी है।

यदि भाषा की दैवी उत्पत्ति हुई होती हो सारे संसार की एक ही भाषा होती तथा बच्चा जन्म से ही भाषा बोलने लगता। इससे सिद्ध होता है कि यह केवल अंधविश्वास है कोई ठोस सिद्धान्त नहीं है।

मिस्र के राजा सैमेटिक्स, फ्रेड्रिक द्वित्तीय (1195-1250), स्काटलैंड के जेम्स चतुर्थ (1488-1513) तथा अकबर बादशाह (1556-1605) ने भिन्न-भिन्न प्रयोगों द्वारा छोटे

Edit with WPS Office

शिशुओं को समाज से पृथक् एकान्त में रखकर देखा कि उन्हें कोई भाषा आती है या नहीं। सबसे सफल अकबर का प्रयोग रहा क्योंकि वे दोनों लड़के गूंगे निकले जो समाज से अलग रखे गए थे। इससे सिद्ध होता है कि भाषा प्रकृति के द्वारा प्रदत्त कोई उपहार नहीं है।

भाषा में नये-नये शब्दों का आगमन होता रहता है और पुराने शब्द प्रयोग-क्षेत्र से बाहर हो जाते हैं।

भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दैवी सिद्धान्त तर्कसंगत नहीं है। इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है। इसमें भाषा की उत्पत्ति की समस्या का कोई समाधान नहीं मिलता। हाँ, इस सिद्धान्त में यहाँ तक सच्चाई तो है कि बोलने की शक्ति मनुष्य को जन्मजात अवस्था से प्राप्त है।

संकेत सिद्धान्त

Edit with WPS Office

इसे निर्णय-सिद्धान्त भी कहते हैं। इस सिद्धान्त के प्रथम प्रतिपादक फ्राँसीसी विचारक रूसो हैं। संकेत सिद्धान्त के अनुसार प्रारम्भिक अवस्था में मानव ने अपने भावों-विचारों को अपने अंग संकेतों से प्रषित किया होगा बाद में इसमें जब कठिनाई आने लगी तो सभी मनुष्यों ने सामाजिक समझौते के आधार पर विभिन्न भावों, विचारों और पदार्थों के लिए अनेक ध्वन्यात्मक संकेत निश्चित कर लिए। यह कार्य सभी मनुष्यों ने एकत्र होकर विचार विनिमय द्वारा किया। इस प्रकार भाषा का क्रमिक गठन हुआ और एक सामाजिक पृष्ठभूमि में सांकेतिक संस्था द्वारा भाषा की उत्पत्ति हुई।

इस संकेत सिद्धान्त के आधार पर आगे चलकर 'रचई', 'राय' तथा जोहान्सन आदि विद्वानों ने इंगित सिद्धानGestural theory का प्रतिपादन किया जो संकेत सिद्धान्त की अपेक्षा कुछ अधिक परिष्कृत होते हुए भी लगभग इसी मान्यता को प्रकट करता है।

समीक्षा * यह सिद्धान्त यह मान कर चलता है कि इससे पूर्व मानव को भाषा की प्राप्ति नहीं हुई थी। यदि ऐसा है तो अन्य भाषाहीन प्राणियों की भाँति मनुष्य को भी भाषा की आवश्यकता का अनुभव नहीं होना चाहिए था।

Edit with WPS Office

यह तर्कसंगत नहीं है कि भाषा के सहारे के बिना लोगों को एकत्रित किया गया, भला कैसे? फिर विचार-विमर्श भाषा के माध्यम के अभाव में किस प्रकार सम्भव हुआ।

इस सिद्धान्त के अनुसार सभी भाषाएँ धातुओं से बनी है परन्तु चीनी आदि भाषाओं के सन्दर्भ में यह सत्य नहीं हैं

जिन वस्तुओं के लिए संकेत निश्चित किये गये उन्हें किस आधार पर एकत्रित किया गया।

संक्षेप में, भाषा के अभाव में यदि इतना बडा निर्णय लिया जा सकता है तो बिना भाषा के सभी कार्य किये जा सकते हैं। अतः भाषा की आवश्यकता कहाँ रही?

इस सिद्धान्त में एक तो कृत्रिम उपायों द्वारा भाषा की उत्पत्ति सिद्ध करने का प्रयास किया गया है दूसरे यह सिद्धान्त पूर्णतः कल्पना पर आधारित है। अतः तर्क की कसौटी पर खरा नही उतरता।

धातु या अनुरणन सिद्धान्त Root-theory

Edit with WPS Office

इस सिद्धान्त के मूल विचारक 'प्लेटो' थे। जो एक महान दर्शनिक थे। इसके बाद जर्मन प्रोफेसर हेस ने अपने एक व्याख्यान में इसका उल्लेख किया था। बाद में उनके शिष्य डॉ॰ स्टाइन्थाल ने इसे मुद्रित करवा कर विद्वानों के सामने रखा। मैक्समूलर ने भी पहले इसे स्वीकार किया किन्तु बाद में व्यर्थ कहकर छोड़ दिया।

इस सिद्धान्त के अनुसार संसार की हर चीज की अपनी एक ध्वनि है। यदि हम एक डंडे से एक काठ, लोहे, सोने, कपड़े, कागज आदि पर चोट मारें तो प्रत्येक में से भिन्न प्रकार की ध्वनि निकलेगी। प्रारम्भिक मानव में भी ऐसी सहज शक्ति थी। वह जब किसी बाह्य वस्तु के सम्पर्क में आता तो उस पर उससे उत्पन्न ध्वनि की अनुकरण की) छाप पड़ती थी। उन ध्वनियों का अनुकरण करते हुए उसने कुछ सौ (400या 500) मूल धातुओं (मूल शब्दों) का निर्माण कर लिया जब कुछ कामचलाऊ धातु शब्द बन गए और उसे भाषा प्राप्त हो गई तो उसकी भाषा बनाने की सहज शक्ति समाप्त हो गई। तब वह इन्हीं धातुओं से नए-नए शब्द बना कर अपना काम चलाने लगा।

Edit with WPS Office

इस सिद्धान्त की निस्सारता या अनुपयोगिता के कारण ही मैक्समूलर ने इसका परित्याग किया था। इसके खण्डन के लिए निम्नलिखित तर्क दिए जा सकते हैं-

इस सिद्धान्त के अनुसार आदि मानव में नये-नये धातु बनाने की सहज शक्ति का होना कल्पित किया गया है जिसका कोई प्रामाणिक आधार नहीं है।

यह सिद्धान्त शब्द और अर्थ में स्वाभाविक सम्बन्ध मान कर चलता है किन्तु यह मान्यता निराधार है।

इस सिद्धान्त के अनुसार सभी भाषाएँ धातुओं से बनी हैं किन्तु चीनी आदि कुछ भाषाओं के सम्बन्ध में यह सत्य नहीं है।

आज भाषाओं के वैज्ञानिक विवेचन से यह मान्यता बन गई है कि सभी 'धातुओं' या मूल शब्दों की परिकल्पना भाषा के बाद व्याकरण-सम्बन्धी विवेचन का परिणाम है।

यह सिद्धान्त भाषा को पूर्ण मानता है जबकि भाषा सदैव परिवर्तन और गतिशील होने के कारण अपूर्ण ही रहती है।

आधुनिक मान्यता के अनुसार भाषा का आरम्भ धातुओं से बने शब्दों से न होकर पूर्ण

Edit with WPS Office

विचार वाले वाक्यों के द्वारा हुआ होगा।

अपने पूर्ववर्ती सिद्धान्तों की भाँति यह सिद्धान्त भी तर्क की कसौटी पर विफल हो जाने के कारण भाषा के आरम्भ का कोई निश्चित समाधान प्रस्तुत नहीं कर सका। अतः इस विषय पर विचार की पुनः आवश्यकता बनी ही रही।

अनुकरण सिद्धान्त Bow & Bow Theory

इस सिद्धान्त को मानने वाले प्रमुख विद्वान हैं- 'ह्निटनी' 'पॉल', 'हर्डर' आदि। मैक्समूलर ने इस सिद्धान्त का उपहास करते हएु इसे (कुत्ते की ध्वनि) बॉक बॉब सिद्धान्त कहा था। वैसे अंग्रेजी भाषा में इसके लिए ऑनोमॉटोपेथिक (Onomotopethic) या इकोइक (Echoic) शब्द का प्रचलन है। अनुकरण सिद्धान्त में भी अनुरणन की ही भाँति कुछ प्राकृतिकक ध्वनियों के अनुकरण पर पदार्थों के नामकरण की कल्पना की गई है। कुछ शब्द उदाहरण के लिए प्रस्तुत हैं- 'काक', 'कोकिल' 'भौं-भौं', 'म्याऊँ', 'कुक्कर', 'दादुर', 'निर्झर', 'टर्राना', 'मर्मर', 'तड़तड़', 'कडकना' 'गड़गड़ाना', 'टपकना', 'चहकना',

Edit with WPS Office

'चहचहाना', 'हिनहिनाना', 'गुर्राना', 'काँव-काँव', 'टेंटें करना', 'चिल्लाना', 'गरजना', 'टप-टप', आदि।

विद्वानों ने इस सिद्धान्त के खण्डन के लिए निम्नलिखित तर्क दिये हैं:

प्रसिद्ध विद्वान् 'रेनन' के अनुसार ध्वनियों का उत्पादन करने में मनुष्य पशु-पक्षियों से भी निकृष्ट सिद्ध होता है इसलिए यह सिद्धान्त विश्वास करने के योग्य नहीं है।

यद्यपि कुछ भाषाओं में अनुकरणामूलक शब्द पाये जाते हैं। परन्तु इन शब्दों की संख्या इतनी अधिक नहीं होती कि इनसे भाषा का उत्पन्न होना मान लिया जाए। उत्तरी अमेरिका की एक भाषा 'अथवाकन' में तो एक भी शब्द अनुकरणमूलक नहीं है।

अनुकाणमूलक शब्द सभी भाषाओं में एक समान नहीं हैं उनका रूप भिन्न-भिन्न है। कुछ विद्वानों ने इसका कारण भिन्न-भिन्न भाषाओं में ध्वनियों की भिन्नता बताया है परन्तु यह स्वीकार इसलिए नहीं किया जा सकता क्योंकि ध्वनियाँ तो इस सिद्धान्त के अनुसार अनुकरण का ही परिणाम है, हाँ अनुकरण की अपूर्णता इसमें आंशिक रूप में कारण

Edit with WPS Office

माना जा सकता है।

अनुकरण पर बने शब्द किसी भाषा में बहुत कम संख्या में होते हैं जिनके आधार पर भाषा का अलंकरण तो हो सकता है परन्तु उन्हें पूरी भाषा के अस्तित्व का आधार नहीं माना जा सकता।

'ऑटो जेस्पर्सन' नामक विद्वान ने कहा था कि इस सिद्धान्त पर भाषा के कुछ शब्दों का निर्माण होना माना जा सकता है जो भाषा की उत्पत्ति का आंशिक आधार माने जा सकते हें, पूर्ण आधार नहीं।

आवेश सिद्धान्त Pooh-Pooh Theory or Interjectional theory

इस सिद्धान्त को मनोभावाभिव्यंजकतावाद अथवा 'मनोरागाभिव्यंजक शब्द मूलकतावाद' कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आदि युग के भावुक मानव ने

Edit with WPS Office

भावावेग में हर्ष, शोक, क्रोध, विस्मय, घृणा आदि को व्यंजित करने के लिए जिन 'आहा', 'ओहो', 'फिक्' 'छिः' पूह (Pooh), 'पिश (Pish) 'फाई' (Fie) आदि ध्वनियों को उत्पन्न किया आगे चल कर उन्हीं से भाषा का विकास हुआ। जिस प्रकार 'धिक्' से 'धिक्कार', 'धिक्कारना', 'धिक्-धिक्' करना आदि शब्द बने हैं ठीक इसी प्रकार सारी भाषा बनी है।

इस सिद्धान्त में अनेक प्रकार की कमियाँ हैं, जैसे-

भाव-व्यंजक शब्दों को वाक्य के पहले अलग से जोड़ा जाता है वे हमारी भषा का मुख्य अंग या सम्पूर्ण अस्तित्व नहीं है।

'बेनफी' के अनुसार इस प्रकार के शब्द भाषा की असमर्थता को प्रकट करते हैं फिर वे भाषा कैसे बन सकते हैं।

भाषा सोच विचार कर उत्पन्न की गई ध्वनियों का व्यवस्थित रूप है परन्तु ये आवेशजनित निकलने वाले शब्द विचार और व्यवस्था से रहित होते हैं। ये तो स्वतः ही

Edit with WPS Office

मुख से निकलने वाले आवेग हैं।

इस प्रकार के शब्दों की संख्या किसी भी भाषा में इतनी थोड़ी होती है कि उसके आधार पर सम्पूर्ण भाषा के निर्माण की कल्पना नहीं की जा सकती।

ये शब्द जो आवेगों को प्रकट करते हैं सभी भाषाओं में एक समान रूप से उपलब्ध नहीं होते हैं जैसे- पीड़ा को व्यक्त करने के लिए अंग्रेजी ओह, (Oh), जर्मन 'आउ' (Au), फ्रांसीसी 'आहि' (Ahi) भिन्न-भिन्न शब्दों का प्रयोग करते हैं। हिन्दी में इसके लिए 'हाय', 'दैया' आदि शब्दों का प्रयोग होता है।

इस सिद्धान्त के अनुसार जोथोड़े से शब्दों का समाधान हो पाता है उनका भाषा में कोई विशेष महत्त्व नहीं है। जैसे खेद या सहानुभूति व्यक्त करने के लिए 'च-च', 'त-त' आदि का रूप संदेहात्मक है इसलिए उसे कुछ भी अध्ययन-विश्लेषण का आधार नहीं बनाया जा सकता।

श्रम-ध्वनि सिद्धान्त (yo-he-ho- theory

Edit with WPS Office

हिन्दी में इसे ‘श्रमपरिहरणमूलकतावाद’ कहा जाता है। न्वारे (Noire) नामक प्रसिद्ध विद्वान् द्वारा इस सिद्धान्त का सूत्रपात किया गया। इस सिद्धान्त के अनुसार जब व्यक्ति श्रम करता है तो उसकी श्वास की गति तीव्र होने से स्वरतंत्रियों में स्वतः एक कम्पन्न होने लगता है जो कुछ स्वाभाविक ध्वनियों को उत्पन्न करता है। आदि मानव जब सामूहिक श्रम करते थे तो उनके मुख से कुछ ध्वनियाँ निकल पड़ती होंगी जैसी हम धोबियों के मुख से ‘हियो-हियो’, ‘छियो-छियो’, तथा मल्लाहों के मुख से ‘हैया हो’, हथौड़ा चलाने वाले मज़दूर के मुंह से ‘हूँ-हूँ’ की ध्वनियाँ निकलते हुए प्रायः देखते हैं।

अंग्रेज़ी के ‘हीव’ (Heave) तथा ‘हॉल’ (Houl) ‘यो-हे-हो’ ध्वनियों के द्वारा बनी हुई क्रियापद हैं।

इस सिद्धान्त में निम्नलिखित त्रुटियाँ हैं-

Edit with WPS Office

आवेग से उत्पन्न ध्वनियाँ निरर्थक हैं और निरर्थक ध्वनियों द्वारा किसी सार्थक भाषा को विकसित कैसे किया जा सकता है।

ये ध्वनियाँ केवल शारीरिक श्रम को व्यक्त कर पाती है, भावों और विचारों की इनमें कोई अभिव्यक्ति नहीं होती।

इसमें जो शब्द हैं वे इतनी अल्प संख्या में हैं कि उन्हें सम्पूर्ण भाषा के विकास का आधार नहीं बनाया जा सकता।

इस सिद्धान्त के आधार पर बने शब्दों से भाषा की उत्पत्ति की समस्या का समाधान प्राप्त नहीं होता। प्रसिद्ध समाजशास्त्री, अंग्रेज़ वकील ए. एस. डायमण्ड को एक प्राचीन भाषा 'ओर' में एक भी शब्द ऐसा नहीं मिला जो इस सिद्धान्त पर आधारित हो। अतः ऐसी भाषाओं के सम्बंध में तो यह सिद्धान्त पूरी तरह से विफल है।

इंगित् सिद्धान्त Gestural theory

इस सिद्धान्त में विश्वास करने वाले इसके जन्मदाता डॉ॰ राये, 'रिचर्ड' तथा जेहान्सन हैं।

Edit with WPS Office

इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य जब पानी पीता था तो 'पा-पा' जैसी ध्वनि निकालती थी। जिससे 'पिपासा' जैसे शब्द बने।

मानव अपनी ही ध्वनियों का उच्चारण करेगा यह अधिक विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता।

हिंदी तब प्रगति करेगी जब उसमें केवल उपन्यास या कहानी ही न लिखें जाएं बल्कि उन पर नए–नए विषयों, नई–नई विचारधाराओं पर पुस्तकें लिखी जाएं जो आधुनिक दुनिया को आगे बढ़ा रहें हैं। हिंदी को ऐसा बनाना हैं। हम चाहते हैं कि लोग उन विषयों पर पुस्तकें लिखें जिससे दूसरे राज्यों के लोग तुरंत यह चाहे कि इसका अनुवाद उनकी भाषा में करे।

भाषा समाज और संस्कृति

वास्तव में मनुष्य भाषा का व्यवहार स्वयं से ही बातचीत करने के लिए ही नहीं हैं अपितु यह एक ऐसी कड़ी हैं जिसके माध्यम से वह स्वयं समाज की प्रगति में भागीदार हो सकता हैं और उससे जुड़ सकता हैं। इसलिए हर तरह की परिस्थिति में वह समाज की प्रगति में भागीदार होता हैं। किसी भी समाज में भाषा लोकभाषा या उसके ललित–साहित्य से पल्लवित– पुष्पित अथवा सवंर्धित होती हैं या फिर उसके प्रचार मात्रा में उपलब्ध ज्ञान–साहित्य से। चिंतन–साहित्य से मानव की अनुभूतियों व अभिव्यक्तियों की पराकाष्ठा का स्वरूप उसके मौलिक अथवा सृजनात्मक लेखन के द्वारा अभिहित होता हैं जबकि ज्ञान– साहित्य में मानविकी, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान के त्रिकोण से प्राप्त ज्ञान भाषिक माध्यमों से अंतरित होकर पाठकों तथा समाज के समक्ष उपस्थित होता हैं। यद्‌यपि दोनों प्रकार के भाषिक माध्यमों से प्राप्त ज्ञान उतना ही उपयोगी व महत्त्व का होता हैं। किंतु अपेक्षाओं, लोक कल्याण व परोपकारी वृत्ति के कारण इनकी कायिक संरचना में न्यूवता व अधिकता को जब देखा जा सकता है। मौलिक सृजनधर्मी, सार्थक शब्द–चयन, नव सृजित मुहावरों के आधार पर अपनी भाषिक अभिव्यक्ति को अर्थवत्ता

Edit with WPS Office

के साथ– साथ जीवंतता प्रदान करता हैं। वह अपने कथ्य की, सृजनात्मक लेखन की अन्यान्य विधाओं ––यथा– कविता , कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, रिपोर्ताज, संस्मरण

आदि के माध्यम से समाज को व्यक्त करता हैं।

कहानी की कायिका संरचना में न समाहित होने वाला कथ्य विस्तारित होकर उपन्यास का रूप ले सकता हैं। उसी तरह एकांकी की विषय–वस्तु विस्तारित होकर नटक का रूप ले लेती हैं। मौलिक एवं ललित साहित्य के माध्यम से ज्ञान विशुद्ध रूप से हदय की मूलभूत संरचनाओं से उपजा उपजा हुआ गोमुख के गंगाजल–सा निर्मल, निश्छल, पवित्र, प्रभावी व नितांत नैसर्गिक होता हैं, वहीं ज्ञान–साहित्य भौतिकता के अनेक भाषिक अनुवादक रूपी बिचौलियों की क्षीण शक्ति, सामर्थ्य व संप्रेषणीयता के आधार पर अपनी नैसर्गिक अर्थवत्ता, सोद्दश्येता व संप्रेषणीयता को यथावत बनाए रखने में सर्वथा सक्षम होती हैं।

समाज में समुन्नत जीवन जीने के लिए वैज्ञानिक दृष्टि एवं चिंतन की व्यवहार्यता अतीव आवश्यक हैं। हिंदी की अनेक विधाओं के विकास के समानांतर ही प्राचीन की विशाल वैज्ञानिक चिंतन एवं लेखन परंपरा से अनुप्राणित हो नई पीढ़ी के विज्ञान के लेखकों , प्रकाशकों, साहित्यकारों एवं पत्रकारों ने अनेकानेक विषयों पर वैज्ञानिक लेखन को बढ़ावा दिया है, जिससे भाषा में तो प्रगति हो ही उसी के साथ समाज भी विकसित हो। आधुनिक हिंदी के जनक भारतेंदु बाबू के संपादन में प्रकाशित पत्रिका कवि वचन सुधा हो अथवा पं महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में प्रकाशित पकाशित पत्रिका 'सरस्वती', इन्होंने सृजनात्मक लेखन की उत्तुंगता के प्रतिमान स्थापित करने के साथ–साथ विज्ञान लेखन के वे सशक्त बीज भी समय–समय पर समूची भाव धरा में छितराए जिसने विज्ञान लेखन के महाविटप को न केवल पल्लवित– पुष्पित किया अपितु उसकी हरी–भरी शाखाओं के रूप में विज्ञान कथाएं, विज्ञान नाटक, वैज्ञानिक शोध पत्र से समाज के जीवन में विज्ञान का सूत्रपात किया गया।

अतः राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी भाषा के माध्यम से तथा अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक लेखन से समाज को परिचित कराकर उनके जीवन के चहुंमुखी विकास में एक सुखद व समृद्धशाली भविष्य की नींव डाली जा सकती हैं। जिसमें कल का समृद्ध खुशहाल भारत

Edit with WPS Office

खिलखिलाता हुआ दृष्टिगोचर हो सकता हैं।

वैश्विक परिदृश्य में भाषा

कई विद्वान अक्सर इस बात पर जोर देते हैं कि किसी रचना को विश्व साहित्य माना जाने वाला कारक उसके मूल देश से परे उसका प्रचलन है। उदाहारण के लिए इस विषय पर डेविड का कहना था कि, "कोई रचना विश्व साहित्य में दोहरी प्रक्रिया से प्रवेश करती है: पहला, साहित्य के रूप में पढ़ी जाने से; दूसरा, अपने भाषाई और सांस्कृतिक मूल बिंदु से परे एक व्यापक दुनिया में प्रसारित होने से"। [1] इसी तरह, विश्व साहित्य के विद्वान वेंकट मणि का मानना है कि साहित्य का "विश्वीकरण"" सूचना हस्तांतरण " द्वारा लाया जाता है जो बड़े पैमाने पर प्रिंट संस्कृति में विकास द्वारा उत्पन्न होता है। पुस्तकालय के आगमन के कारण, "प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता जो सस्ती किताबें छापते और बेचते हैं, साक्षर नागरिक जो इन पुस्तकों को प्राप्त करते हैं, और सार्वजनिक पुस्तकालय जो इन पुस्तकों को उन लोगों को उपलब्ध कराते हैं जो उन्हें खरीदने का जोखिम नहीं उठा सकते हैं, सामूहिक रूप से विश्व साहित्य के के अवलोकन में कई खामियां भी हम देखतें हैं

जोहान वोल्फगैंग गोएथे ने उन्नीसवीं सदी के शुरुआती दशकों में अपने कई निबंधों में विश्व साहित्य की अवधारणा का इस्तेमाल यूरोप में साहित्यिक कृतियों के अंतर्राष्ट्रीय प्रसार और स्वागत का वर्णन

Edit with WPS Office

करने के लिए किया था, जिसमें गैर-पश्चिमी मूल की कृतियाँ भी शामिल थीं। उनके शिष्य जोहान पीटर एकरमैन द्वारा 1835 में गोएथे के साथ बातचीत का एक संग्रह प्रकाशित करने के बाद इस अवधारणा को व्यापक लोकप्रियता मिली। [3] गोएथे ने एकरमैन से चीनी उपन्यास और फ़ारसी और सर्बियाई कविता पढ़ने के उत्साह के साथ-साथ अपने स्वयं के कार्यों का अनुवाद और चर्चा विदेशों में, विशेष रूप से फ्रांस में कैसे की जाती है, इस बारे में अपने आकर्षण के बारे में बात की। उन्होंने जनवरी 1827 में एक प्रसिद्ध कथन दिया, जिसमें भविष्यवाणी की गई थी कि भविष्य में साहित्यिक रचनात्मकता के प्रमुख साधन के रूप में विश्व साहित्य राष्ट्रीय साहित्य की जगह लेगा:

मैं इस बात पर अधिकाधिक आश्वस्त होता जा रहा हूँ कि कविता मानव जाति की सार्वभौमिक सम्पत्ति है, जो हर जगह और हर समय सैकड़ों-सैकड़ों लोगों में प्रकट होती है। ... इसलिए मैं अपने आस-पास के विदेशी देशों को देखना पसंद करता हऔर सभी को ऐसा ही करने की सलाह देता हूँ। राष्ट्रीय साहित्य अब एक अर्थहीन शब्द है; विश्व साहित्य का युग निकट है, और सभी को इसके निकट पहुँचने का प्रयास करना चाहिए।

व्यापार और विनिमय की प्रक्रिया के रूप में विश्व साहित्य की मौलिक रूप से आर्थिक समझ को प्रतिबिंबित करते हुए, कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स ने अपने कम्युनिस्ट घोषणापत्र 1848) में बुर्जुआ साहित्यिक उत्पादन के "महानगरीय चरित्र" का वर्णन करने के लिए इस शब्द का इस्तेमाल

Edit with WPS Office

किया , और जोर देकर कहा कि:

“देश के उत्पादनों से संतुष्ट पुरानी आवश्यकताओं के स्थान पर, हम नई आवश्यकताएँ पमजिनकी पूर्ति के लिए दूर देशों और जलवायु के उत्पादों की आवश्यकता होती है। ... और भौतिक उत्पादन की तरह ही बौद्धिक उत्पादन में भी। अलग-अलग राष्ट्रों की बौद्धिक रचनाएँ आम संपत्ति बन जाती हैं। राष्ट्रीय एकतरफापन और संकीर्णता अधिक से अधिक असंभव होती जा रही है, और असंख्य राष्ट्रीय और स्थानीय साहित्यों से विश्व साहित्य का उदय होता है।"“

मार्टिन पुचनर ने कहा है कि, “गोएथे को विश्व साहित्य की गहरी समझ थी क्योंकि यह साहित्य में एक नए विश्व बाजार से प्रेरित था। [५] यह बाजार-आधारित दृष्टिकोण मार्क्स और एंग नजरिये १८४८ में उनबद्लाव के घोषणापत्र दस्तावेज़ के माध्यम से मांगा गया था, जिसे चार भाषाओं में प्रकाशित किया गया था और कई यूरोपीय देशों में वितरित किया गया था, और तब से यह बीसवीं शताब्दी के सबसे प्रभावशाली ग्रंथों में से एक बन गया है। जबकि मार्क्स और एंगेल्स ने विश्व साहित्य को एक आधुनिक या भविष्य की घटना के रूप में देखने में गोएथे का अनुसरण किया, १८८६ में आयरिश विद्वान एचएम पॉसनेट ने तर्क दिया कि आधुनिक राष्ट्रीय साहित्य के उदय से बहुत पहले रोमन साम्राज्य जैसे प्राचीन साम्राज्यों में विश्व साहित्य का उदय हुआ था। आज, विश्व साहित्य को सभी अवधियों के शास्त्रीय कार्यों को शामिल करने के रूप में समझा जाता है

Edit with WPS Office

युद्ध के बाद के युग में, संयुक्त राज्य अमेरिका में तुलनात्मक और विश्व साहित्य का अध्ययन पुनर्जीवित किया गया था। तुलनात्मक साहित्य स्नातक स्तर पर देखा गया था जबकि विश्व साहित्य को प्रथम वर्ष की सामान्य शिक्षा कक्षा के रूप में पढ़ाया गया था। मुख्य रूप से ग्रीक और रोमन क्लासिक्स और प्रमुख, आधुनिक पश्चिमी-यूरोपीय शक्तियों के साहित्य पर ध्यान केंद्रित किया गया था, लेकिन 1980 के दशक के अंत और 1990 के दशक की शुरुआत में कारकों के संयोजन ने दुनिया तक अधिक पहुंच बनाई। शीत युद्ध की समाप्ति, विश्व अर्थव्यवस्था का बढ़ता वैश्वीकरण और आप्रवास की नई लहरों ने विश्व साहित्य के अध्ययन का विस्तार करने के कई प्रयास किए। यह परिवर्तन द नॉर्टन एंथोलॉजी ऑफ़ वर्ल्ड मास्टरपीस के विस्तार से स्पष्ट होता है , जिसके 1956 में पहले संस्करण में केवल पश्चिमी-यूरोपीय और उत्तरी अमेरिकी कार्य शामिल थे, जो 1995 में गैर-पश्चिमी चयनों के साथ एक नए "विस्तारित संस्करण" में शामिल हुआ। आज प्रमुख सर्वेक्षण संकलन, जिनमें लॉन्गमैन, बेडफोर्ड और नॉर्टन द्वारा प्रकाशित संकलन शामिल हैं, दर्जनों देशों के कई सौ लेखकों को प्रदर्शित करते हैं।

समकालीन समझ

विश्व साहित्य के शीर्षक के तहत अध्ययन की जाने वाली संस्कृतियों की श्रेणी में विस्फोटक वृद्धि ने इस क्षेत्र को परिभाषित करने और शोध और शिक्षण के प्रभावी तरीकों का प्रस्ताव करने के लिए कई

Edit with WPS Office

सैद्धांतिक प्रयासों को प्रेरित किया है। अपनी 2003 की पुस्तक व्हाट इज़ वर्ल्ड लिटरेचर? में डेविड डैमरोश विश्व साहित्य को कार्यों के विशाल संग्रह से कम और प्रचलन और ग्रहण का विषय अधिक समझते हैं। उन्होंने प्रस्तावित किया कि विश्व साहित्य के रूप में पनपने वाले कार्य वे हैं जो अच्छी तरह से काम करते हैं और अनुवाद के माध्यम से अर्थ भी प्राप्त करते हैं। जबकि डैमरोश का दृष्टिकोण व्यक्तिगत कार्यों के गहन अध्ययन से जुड़ा हुआ है, स्टैनफोर्ड के आलोचक फ्रेंको मोरेटी ने "विश्व साहित्य पर अनुमान" प्रस्तुत करने वाले लेखों की एक जोड़ी में एक अलग दृष्टिकोण अपनाया। मोरेटी का मानना है कि विश्व साहित्य का पैमाना पारंपरिक तरीकों से समझे जाने से कहीं अधिक है, और इसके बजाय "दूरस्थ पढ़ने" की एक विधा की वकालत करते हैं जो प्रकाशन रिकॉर्ड और राष्ट्रीय साहित्यिक इतिहास से पहचाने जाने वाले बड़े पैमाने के पैटर्न को देखेगा।

मोरेटी के दृष्टिकोण ने इमैनुअल वालरस्टीन द्वारा अग्रणी विश्व-प्रणाली विश्लेषण के साथ विकासवादी सिद्धांत के तत्वों को जोड़ा एक दृष्टिकोण जिस पर एमिली एप्टर ने अपनी प्रभावशाली पुस्तक द ट्रांसलेशन ज़ोन में तब से आगे चर्चा की है। उनके विश्व-प्रणाली दृष्टिकोण से संबंधित फ्रांसीसी आलोचक पास्केल कैसानोवा का काम है, ला रिपब्लिक मोंडिएल डेस लेट्रेस (१९९९)। समाजशास्त्री पियरे बौर्डियू द्वारा विकसित सांस्कृतिक उत्पादन के सिद्धांतों प कैसानोवा उन तरीकों की खोज करता है जिसमें परिधीय लेखकों के कार्यों को विश्व साहित्य के रूप में मान्यता प्राप्त करने के लिए महानगरीय केंद्रों में प्रसारित किया जाना चाहिए।

Edit with WPS Office

विश्व साहित्य के क्षेत्र में बहस जारी है, गायत्री चक्रवर्ती स्पिवक जैसे आलोचकों का तर्क है कि अक्सर अनुवाद में विश्व साहित्य का अध्ययन मूल की भाषाई समृद्धि और किसी रचना के मूल संदर्भ में राजनीतिक शक्ति दोनों को संतुलित करता है। इसके विपरीत, अन्य विद्वान इस बात पर जोर देते हैं कि विश्व साहित्य का अध्ययन मूल भाषाओं और संदर्भों पर बारीकी से ध्यान देकर किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, भले ही रचनाएँ विदेशों में नए आयाम और नए अर्थ ग्रहण करें।

विश्व साहित्य श्रृंखला अब चीन और एस्टोनिया में प्रकाशित हो रही है, और विश्व साहित्य के लिए एक नया स जो सिद्धांत और शिक्षाशास्त्र पर महीने भर चलने वाले ग्रीष्मकालीन सत्र प्रदान करता है, उसका उद्घाटन सत्र 2011 विश्वविद्यालय में पेकिंग में हुआ था, इसके अगले सत्र 2012 में इस्तांबुल बिल्गी विश्वविद्यालय और 2013 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय में होंगे। नई सदी के पहले दशक के मध्य से, लगातार कई कृतियों ने विश्व साहित्य के इतिहास और वर्तमान बहसों के अध्ययन के लिए सामग्री प्रदान की है। निबंधों के मूल्यवान संग्रह में शामिल हैं:

- **मैनफ़्रेड श्मेलिंग , वेल्टलिटरेचर ह्युटे (1995**
- **क्रिस्टोफर प्रेंडरगैस्ट , डिबेटिंग वर्ल्ड लिटरेचर (2004)**
- **डेविड डैमरोश , विश्व साहित्य शिक्षण (2009)**

Edit with WPS Office

अंतरसांस्कृतिक

भाषा के दो मुख्य प्रकार होतें हैं जिनके द्वारा हम संप्रेषण करते हैं– वाचिक और अवाचिक। अवाचिक संप्रेषण शारीरिक हाव–भाव, भंगिमाओं तथा आंखों की सहायता से होता हैं। विभिन्न संस्कृतियां समय के साथ–साथ अपने भीतर विशेष प्रकार की भाव–भंगिमाओं का विकास कर लेती हैं तथा किसी संस्कृति विशेष के संपर्क में आती हैं, तब भी उनकी आधारभूत अवाचिक संप्रेषण प्रक्रिया वहीं रहती हैं। भाषा मनुष्य एवं समाज के बीच आधारभूत संप्रेषण का जरिया भी हैं। हम किसी भी वास्तविक अर्थ में, भाषा के बगैर संप्रेषण स्थापित कर ही नहीं सकते, परंतु ऑगिक हाव–भाव इसके अपवाद हैं । भाषा विभिन्न समुदायों के बीच भौगोलिक, जलवायु तथा समाज की मनोवैज्ञानिक संरचना के आधार पर विकसित होती हैं इसलिए जिस तरह हम यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि संपूर्ण दिशा के मानव समाज की मनोवैज्ञानिक संरचना के आधार पर विकसित होती हैं इसलिए जिस तरह हम यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि संपूर्ण दिशा के मानव समुदायों के बीच संस्कृति या संप्रेषण एक समान थे, ठीक उसी प्रकार हम भाषा से भी यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि वह संपूर्ण दिशा के मानव समुदाय के लिए परिपूर्ण होगी। निःसंदेह वह विभिन्न प्रकार के रूपाकार धारण कर सकती हैं। यह लघु गद्य रचना भी हो सकती हैं। इसकी विशेषताओं के मद्देनजर यह भी सोचा जा सकता हैं कि यह कला अन्य जीवित प्रजातियों में विकसित क्यों नहीं हुई।

भौतिकतावादी विज्ञान न सिर्फ इस बात को समझने में असमर्थ हैं कि बोली का विकास किस भांति हुआ और न ही यह कि इतनी सारी भाषाओं का उदभव किस प्रकार से संभव हुआ। भाषा–वैज्ञानिक अनुसंधानों ने तंत्रिका संरचना तंत्र पर आश्रित होती हैं, जो कि मानव मस्तिष्क के स्थान विशेष में विद्यमान होते हैं। बाइबिल में इतनी विविधोन्मुखी भाषाओं के उद्भव को,

Edit with WPS Office

टॉवर ऑफ बेबेल में उल्लिखित घटना के माध्यम से विश्लेषित किया गया हैं जो कि जेनेसिस में उल्लेखित हैं

उक्त ग्रंथ बहुत ही सहज एवं आत्मविश्वास से पूर्ण तरीके से यह प्रतिपादित करता हैं – (11:1) जब नोआ और उसके परिवार ने नाव के बाहर कदम रखा तब उन्होंने एक ही भाषा का उच्चारण किया और वही भाषा उनके वंशजों के बीच कालांतर में विकसित होती रही। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भाषा विभिन्न समुदायों के बीच भौगोलिक, जलवायु तथा समाज की मनोवैज्ञानिक संरचना के आधार पर विकसित होती हैं इसलिए जिस तरह हम यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि संपूर्ण दिशा के मानव समुदायों के बीच संस्कृति या संप्रेषण एक समान थे। भाषाएं कुछ निश्चित प्रतीकों, व्याकरणों तथा वाक्य–विन्यास के आधार पर विकसित होती हैं, जिनसे वे अर्थवान बन सके।

भाषा संप्रेषण का सर्वाधिक शक्तिशाली माध्यम हैं क्योंकि यह प्रत्येक समाज तथा समुदायों में भिन्न होती हैं तथापि किसी एक खास समाज को जानने की दिशा में अनुवाद की आवश्यकता होती हैं। अब चूंकि हम भली–भांति जानते हैं कि संप्रेषण की प्रक्रिया किस प्रकार कार्य करती हैं तथा किस प्रकार भाषा की उसमें आवश्यकता होती हैं।

इसलिए सबसे पहले हमें एक बार संस्कृति, संप्रेषण और भाषा के संबंध को देखना पड़ेगा। 'संस्कृति' से तात्पर्य हैं लोकवार्ता, भाषा, नियम, ज्ञान, अनुष्ठान, आदतें, जीवनशैलियां, विचार, मान्यताएं तथा रीति–रिवाज जो आपस में जोड़ने का कार्य करें एक खास समय में, किसी विशेष समूह के लोगों को एक समान पहचान प्रदान करें।

तभी सामाजिक इकाइयां अपनी संस्कृति का विकास करती हैं। यहां तक कि दो व्यक्तियों के आपसी संबंधों में भी समय की गति के साथ–साथ संस्कृति का विकास भी होता हैं। जैसेः– दो व्यक्तियों के संबंध में भी उनका स्वयं इतिहास, साझा अनुभव, भाषा की प्रकृति आदि होता हैं। अनुष्ठान आदतें तथा रीति रिवाज उस संबंध को एक विशेष दिशा प्रदान करती हैं। उदहारणार्थः– विशेष तिथियां, स्थान, गीत या विशेष अवसर गिने जा सकते हैं, जो मिलकर उन दो व्यक्तियों के लिए एक अद्वितीय तथा महत्त्वपूर्ण प्रतीकात्मक अर्थ प्रदान करते हैं। समूह

Edit with WPS Office

भी नियम, अनुष्ठान प्रथाओं तथा अन्य प्रवृत्तियों से संयुक्त संस्कृति का विकास करते हैं, जो उस सामाजिक इकाई को एक विशेष पहचान प्रदान करती हैं। जहां एक समूह पारंपरिक तौर पर मिलता है, भले ही सम्मिलन समय पर आरंभ हो या न हो, किन–किन मुद्दों पर चर्चा होती हैं, किस प्रकार निर्णय लिए जाते हैं आदि।

अंतःसांस्कृतिक संप्रेषण में संवाद एक ही भाषा में होता हैं। फिर भी भाषा का प्रयोग एक व्यक्ति के सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण पर भी निर्भर होता हैं।

आज दुनिया की कोई ऐसी जगह नहीं है जहाँ भारतीय न हों। अप्रवासी भारतीय पूरे विश्व में फैले हुए हैं, यदि हम आंकड़ों पर गौर करें तो पाते हैं कि विश्व में फैले इन अप्रवासी भारतीयों की संख्या लगभग 2 करोड़ है जिनके मध्य हिन्दी का पर्याप्त प्रचार प्रसार है। ''आज हिन्दी भाषा का अध्ययन विश्व के अनेक देशों में प्राथमिक स्तर पर, माध्यमिक स्तर पर, तो कहीं विश्वविद्यालय स्तर पर हो रहा है। कहीं यह अपनी मातृभूमि भारत से जुड़े रहने का भावात्मक माध्यम लगता है तो कहीं इसका उद्देश्य आधुनिक भारत के अंतर्मन को समझना है। विश्व में हिन्दी शिक्षण को बढ़ावा देने के लिए निजी संस्थाएँ, धार्मिक सस्थाएँ और सामाजिक सस्थाएं तो आगे आ ही रही हैं, सरकारी स्तर पर विद्यालय एवं विश्व विद्यालयों द्वारा भी हिन्दी शिक्षण का बखूबी संचालन किया जा रहा है। उच्च अध्ययन संस्थानों में भी अध्ययन–अध्यापन एवं अनुसंधान की अच्छी व्यवस्था है।' इस सम्बंध में अमेरिकी विद्वान डॉ. शोमर का कहना है ''अमेरिका में ही 113 विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में हिन्दी अध्ययन की सुविधाएं उपलब्ध हैं, जिनमें से 13 तो शोध स्तर के केन्द्र बने हुए हैं। आँकड़े बताते हैं कि इस समय विश्व के 143 विश्व विद्यालयों में हिंदी शिक्षा की विविधि स्तरों पर व्यवस्था है।''5 आज दुनिया में लगभग 45 से अधिक देशों के विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिन्दी का पठन–पाठन और शिक्षा जारी है। भारत के बाहर जिन देशों में हिन्दी का बोलने, लिखने–पढ़ने तथा अध्ययन और अध्यापन की दृष्टि से प्रयोग होता है, उनको अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से निम्न वर्गों में बांटा जा सकता है – 1. जहाँ भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते हैं, जैसे–पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंगलादेश, म्यामांर, श्रीलंका व मालदीव आदि। 2. भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पवू र्ी एशियाई देश, जैसे इंडोनेशिया, मलेशिया, थाइलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा कनाडा।

Edit with WPS Office

वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी का स्वरूप

जहाँ हिन्दी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है, जैसे– अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और यरूोप के देश। अरब तथा अन्य इस्लामी देश जैसे संयुक्त अरब अमीरात (दुबई), अफगानिस्तान, कतर, मिश्र, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि। निश्चित रूप से आज हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किसी पहचान की मोहताज नहीं है वरन उसने विश्व परिदृश्य में एक नया मुकाम हासिल किया है। अमेरिका जो कि आज उन्नत टेक्नोलाजी, बेहतर शिक्षा, दूर संचार के क्षेत्र में दुनिया में अग्रणी है वहाँ भी हिन्दी भाषा का प्रयोग बढ़ा है और इसके प्रचार–प्रसार की पुरजोर वकालत की जा रही है। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जार्ज बुश ने तो राष्ट्रीय सुरक्षा भाषा कार्यक्रम के तहत अपने देशवासियों से हिंदी, फारसी, अरबी, चीनी व रूसी भाषाएँ सीखने को कहा था। अमेरिका जो कि अपनी भाषा और पहचान को लेकर दुनिया में श्रेष्ठता का दावा करता है, हिन्दी सीखने में उसकी रूचि का प्रदर्शन निश्चित ही भारत के लिए गौरव की बात है। अमेरिकी राष्ट्रपति ने स्पष्टतया घोषणा की कि ''हिन्दी ऐसी विदेशी भाषा है, जिसे 21वीं सदी में राष्ट्रीय सुरक्षा और समृद्धि के लिए अमेरिका के नागरिकों को सीखना चाहिए।''

Edit with WPS Office

22 राजभाषाओं में एकरूपता

हमारे संविधान की अष्टम् अनुसूची में 22 भाषाओं का राजभाषा का दर्ज़ा प्राप्त हैं। यही नहीं हमारी लगभग 12 भाषाएं ऐसी हैं, जिनका उच्चारण भी देवनागरी भाषा में मिलता हैं । इससे कहीं न कहीं इस बात को भी सार्थकता मिलता हैं कि इन सभी भाषाओं का मूल एक ही हैं। इसे निम्न दी गई तालिका में विशेष रूप से दर्शाया गया हैं।

क्र सं	हिंदी	संस्कृत	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी
1	कोढ़	कुष्ठः	कोढ़	जुज़ाम	म्योंद
2	कृमि	कृमिः	किरम	किर्म	आम
3	कैंसर	कर्कट	कैनसर	कैन्सर	कन्सर
4	कै (वमन)	वमनम्	कै	कै	द्रौख
5	खांसी	कासः	खंघ खांसी	खांसी	चास
6	खुजली	कंडु	खाज, खुरक	खारिश	तछिन्य
7	गठिया	संधिवातः	गंठीयाा	वजअे–मफासिल	रिह हार
8	चेचक	मसूरिका	माता, चेचक	चेचक	]ुतुल्य
9	छाला	स्फोटक	छाला	छाला	बस्तु, हठ
10	छोटी माता	खसः	छोटी माता, काकड़ा–लाकड़ा	खसरा	होलहॅज
11	जलोदर	जलोदर	जलोदर	अजमे नेहाल	यॅड दग
12	जुकाम	प्रतिश्यायः	जुकाम	जुकाम	जुकाम, नॅजलु
13	ज्वर	ज्वरः	बुखार	बुखार	तफ
14	टेटनस	धनुर्वातः	टैटनस	टेटनस	टेटनस
15	तपूदिक	यक्ष्मन्	तपदिक्क	तपेदिक	सिलु
16	दमा	वास	दमा	दमा	तम
17	दाद	दद्रुः, दद्र	दद्दर	दाद	दॅदुर
18	नासूर	नाडीव्रण	नसूर	नासूर	नोसर
19	पागलपन	उन्मादः	पागलपण	पागलपन	ॅफॅलवाय
20	पीड़ा	पीड़ा	पीड़	दर्द	दग
21	पीलिया	पांडुरोग	पीलीआ	यरकान	कांबल
22	पेचिश	अतिसारः	पेचसा	पेचिश	पीचिश
23	प्रदर	प्रदरः	लकोरिया	सैलाने–रहम	सॉलानु
24	प्रमेह	प्रमेहः	जरिआन	जरयान	तोनु
25	प्लेग	मूषिकरोग	प्लेग	ताऊन	फयफुर

Edit with WPS Office

सिंधी मराठी गुजराती, कोंकणी, नेपाली, बांग्ला और असमिया में उपर्युक्त शब्दों के अर्थ

सिंधी	मराठी	गुजराती	कोंकणी	नेपाली	बंगला	असमिया
कोढु	कोड, महरोग	कोढ, रक्तपित्त	कुश्टरोग, रक्तपिती	कुष्ठ, कोर	कुष्ठ	कुष्ठ
कीओं, कीड़ो	कृमि	क	दंत	कृमि	कृमि	कृमि
कन्सर	कर्क	केन्सर	कॅनसर, क्रॉक	क्याअर्बुद	कयानसार	कर्कट रोग
कैं	वांती	वमनम्	ओंक	बांता	बमि	बमि
खंघि	खोकला	चुम, कुर	खांक	खोकी	काशि	काह
खारिस	खाज, खरूज	चारिच्चिल	खाज	लुतो चिलचिलई	खुजली	खाज,खजुवति
संधनि जो सुरू	संधीवात	वातम्	सादयांची	संधि–वाथ	गंढेबात	बातविष
माता, बड़ी माता	देवी	वसूरि	देवी	बिफर	बसंत	गांठेबात
लिफ, फोफीडो	फोल्लो, किंवा	क	फोड	फोको	छाला, फोस्का	पानीजला, बसं
नंढ़ी माता	चोलल्यान	अछबडा	फुगांव	ठेउला	पानबसत्त	आइ
जलंदर	कांजिणी	जलंधर	जलोदर	जलोदर	उदरी	उदरि
जुकाम	जलोदर	सलेखम	थंडी	रूघा	सर्दि–ज्वर	पानीलगा
बुखार	पडसे, सर्दी	ज्वर	जोर	जरो	ज्वर	जवर
टेटनस	धानुर्वात	धनुर, धनुर्वा	धनुर्वात	धनुष्टंकार	धनुषटंकार	धनुटकर
तपेदिक सिल्ह	क्षय	क्षय रोग	क्षय रोग	क्षयरोग	युक्ष्मा	यक्ष्मार
दम, दमो	दमा	दमनो रोग	दमो, उसरमट	दम,धमकी को रोग	हांफानी	हारा
डढु	गजकर्ण	घाघर	चरतें	दाद	दाद	खुरा खर
नासूर	खोल जुनाट	सडंतु छिद्र	नाकांची, कोरांतपी	पुरानो घाउ	नाली–घा	नाडीब्रण
चरियाई	बेड	गांडपण	पिशेंपण	बहुलापन	पागलमि	बलयालि
सूरू	व्यथा	पीड़ा	पिडा	दुखाई, पीड़ा	व्यथा	बेदना
साई	कामील	कमलो	कामीण	कमल पित्त, कामला	न्याबा	कमला
सूरी, पेचिश	मुरडा	मरडो	हागवण	अतिसार	आमाशा	ग्रहणी अतिसार
अछो पाणी, लकोरियाा	प्रदर	प्रदर	प्रदर	प्रदर	प्रदर	प्रदर
जरयान	मूत्ररोग	परिमियो	प्रमेह	प्रमेह	प्रमेह	मेह
प्लेग	प्लेग	प्लेग	महामारी	महामारी	प्लेग	प्लेग

मणिपुरी, ओड़िया, तेलुगू, तमिल, मलयालम और कन्नड़ भाषाओं में प्रथम 25 शब्दों की एकरूपता

मणिपुरी	ओड़िया	तेलुगू	तमिल	मलयालम
कुस्ती लाइथ्ड़	कुष्ठ	कुष्ठु	तालु नोय्	कुष्ठम्
तील–काड़्	कृमि	पुरूगु	किरूमि	कृमि

Edit with WPS Office

तीलकाड	कर्कट रोग	कैन्सरू	पुट्टु नोय्	कान्सर्
ॅकैंसर	बांति	वांति, डोकु	वांदि	कान्सर्
ओबा	काश	दग्गु	इरूमल्	वमनम्
लोक खुबाा	कुंडिआ	दुरद	अरिप्पु	चुम, कुर
हाकाचा	गांठेबात	कील्ल वातमु	कील् वादं	चारिच्चिल
लू–तांड़	हाड़फुटी	बॉब	कोप्पुलम	वातं
पोकथोकपा	फोटका, फुल्ला	चिन्नअम्मवारू	चिन्नमै	वसूरि
फुला	हाड़फुटी	जलोदरमु	महोदरम्	पोक्स
फुगाम	जलोदर	जलुबु	जलदोषम्	चिक्कन, पोक्स
लोक थूडबा	सर्दि	ज्वरमु	जुरम्	महोदरम्
अरूम लाइहौ	ज्वर	टिटानस	काय्च्चल	जलदोषम्
टिटनस	धनुष्टंकार	क्षय रोगमु	दनुर, वायु	ज्वरं
क्षय रोग	राजजख्मा	उब्बसम्	काश रोगम्	टटटनस
दम	वास रोग	अस्थमा	आस्तमा	क्षयं
लाइकोइ	जादु	तामर	पुण, रणम	पुलुक्क्टि
चाफत्पा	नाक–रोगविशेष	लूटि	पैरित्त्यम	व्रणम
अंगाऔबगी	पागलामी	पिच्चि	वलि	उन्मादम्
नाबा	पीड़ा	बाध	मंजल कामालै	वेदन
जोनतिस	कालामल रोग	पसिरीकलु	सीत बेदि	मंजिप्पत्तम्
पुक थिनबा	आमाशय	भेदुलु	वयिट्टु	वयरूकटि
फिडौ	प्रदर रोग	प्रदरमु	वललैपाक्कु नोय	प्रदरम्
प्रमेह	धातु थोकपगी लाइना	प्रमेहमु	मेह नोय	प्रमेहम्
प्लेग	प्लेग	प्लेगु	कांलले नोय	प्लेग

Edit with WPS Office

26	फोडा	स्फोटक, गण्डः	फोड़ा	फोड़ा	बवासीर	फुरिड़ी
27	बवासीर	अर्शः	बवासीर	बवासीर	ıार्यर	बवासीर
28	भैंगापन	केकरता	भैंगापन, भविंगापण	भेंगापन	आवलुन ॅफेरून	टेडाई
29	मतली	विवमिषा	कचिआह्ण	मतली	ıक्कर, डायबिटीज	उबिथो, दिल कची
30	मधुमेह	मधूमेह	ıक्कर रोग	जियाबीतुस	जियाबीतुस	मिठा पेशाब
31	मरोड़	आन्त्रशूलः	मरोड़	मरोड	पेछ	पेचु, वटु
32	मलेरिया	मशकज्वर	मलेरिया	मलेरिया	मलेरिया	मलेरिया
33	मसा	मांसकोलः	महुका, मस्सा	महुका	मस्सा	हसाो,ससो
34	मिरगी	अपस्मार	मिरगी	मिरगी	मिरगी	मिरगी
35	मोतियाबिंद	मुक्ताबिंदु	मोतिअबिंद	मोतिअबिंद	मोतियाबिंद	मोतियो
36	मोती झरा	विषमज्वर	मोतीझरा	मोती झारा	मोती झारा	सन्हो तपु
37	रक्त चाप	रक्तचापः	लहू–दबा	ब्लड प्रेशर	बल्डप्रेशर	रतुजोदाबु
38	रति–रोग	रतिरोगः	गुप्त–रोग	पोशीदा अमराज	मयथनु, रूग	आतिष जी बीमारी,
39	रतोंधी	रातंधता	अंधराता	ıबकोरी	अंछ दोद	राति अंधाई
40	रोहे	नैत्रलोहित्यम्	कुकरे, रोहे	रमद	रोहि	रोहा कुकरा
41	विषरक्तता	विषरकतता	जहिरबाद	सम्मीयते खून	रथ–जहरीलु	जहरबाद
42	व्रण	व्रणः	फोड़ा	दुंबल	जखुम	घाउ, फटु
43	ıूल	षूलः	सूल	दर्द	दग	सुरू, दर्द
44	ıोथ	ıोथ	सोज	वरम	वरम	सोजि
45	लेष्मा	लेष्मन्	बलगम	बलगम,कफ	बलगम	बलगम
46	संधिवात	संधिवातः	गंठीआ	बजअे–मफसिल	रीह	संधनि जो सुरू
47	सन्निपात	सन्निपात	सरसाम	सरसाम	सरसान	सरसाम
48	सिरदर्द	शिरोवेदना	सिर पीड़	दर्दे सर, सुदाअ	कलुदोद	मथे जो सुरू
49	हिचकी	हिक्का	हिचकी	हिचकी	हिडिकी	हिडकी
50	हार्निया	अन्त्रवृद्धि	़हरनीआ	हर्निया	ह्युक	हर्निया

उपर्युक्त तालिका में हिंदी, संस्कृत, पंजाबी,उर्दू, कश्मीरी और सिंधी भाष में शब्दों के अर्थ बताए गए हैं।

Edit with WPS Office

निम्नलिखित तालिका में क्रमशः मराठी, गुजराती, कोंकणी नेपाली बांग्ला असमिया और मणिपुरी भाषा में 26 से 50 तक के शब्दों के अर्थ दिए गए हैं।

प्लेग	प्लेग	महामारी	महामारी	प्लेग	प्लेग	प्लेग
फोड	फोडलो	फोफूड	बीक	फोड़ा	फोडा	फोहा
मूलव्याध	हरस	मूलव्याध	बवासीर	बवासीर	बवासीर	अर्श
तिरलेपणा	बांडापणु	तिरशेपण	डेढ़ोपन	टेरामो	बिबमिषा	केरांचुक
मलमल	ऊबक, बकारी	धवल	वाकवाक	धवल	मधुमेह	मतशेप्पा
मधुमेह	मधुमेह	गोडेमूत	मधुमेह	मधुमेह	मोचड़	ओनिडबा
मुरडा	पेटमा	पोटांत	उदरशूल	मोचड़	मोचड़	ईशिड्
हींवताप	टाढियों ताव	मलेरिया	मलेरिया	म्यालेरिया	मेलेरिया	मेलेरिया
चामखील	हरस, मसो	चामखील	कोठी, मुसा	आंचिल	माह	सजिक
फेंफरे	वाई	फेंपरे	मिर्गी	मिरगी	मृगी	लाइना
मोतीबिंदु	आंखनो	मोतीबिंदु	मोतीबिंदु	छाानि	छानिपरा	डौढोड
सन्हो तपु	सन्हो तपु	सन्हो तपु	म्यादी जरा, टाइफाइड	आंत्रिक ज्वर	सन्निपात	टायफाइड
रतुजोदाबु	रतुजोदाबु	रतुजोदाबु	रक्तचाप	रक्तचाप	रक्तचाप	बी पी लाइना
तिषजी	जातीय रोग	रतिरोग	रतिरोग	यौन रोग	रतिरोग	यादबा लाइना
रातांधलेपण	रतांधलो	रातांधली	रतंधो	रातकाना	कुकुरी	नुमिदाड्
खुपरया	खील	पुली	चक्षुरोग	चक्षुरोग	चकुर रोग	लौनगनबा
विषमिश्रित	लोहीमां	रक्त विकार	विषरक्तता	रक्तविषाक्तता	तेज विष रोग	हू चेनबा
फोड	घा, नारूं	घाय	फोड़ा	फोडाफुसकुडि	ब्रण	याइरोड
वेदना	शूल, पीड़ा	वेदना	शूल व्यथा	पेटेर	सूल	पुकयेक थिनबा
सोजि	सूज	कफ	सूज	सोथ	सोथ	पोमबा
बलगम	कफ	संधिवात	खकार	ाेध	पोमबा	लोक खूबा
संधनि जो सुरू	संधीवात	त्रिदोष रोग	लेष्मा	लेष्मा	लोक खूबा	लू–तांड़
सरसाम	डोकेदुखी	माथानो दुखावो	तकली उसलप	सन्निपात	लू–ताड़	थगोकपा
मथे जो सुरू	माथा पीर	पीड	सिरदर्द	माथा ब्यथा	थगेबा	कोक् कचिकपा
हेडकी,वधणी	खिवणी	खिवनी	वाडुली	हेंचकि	कोक्कचिकपा	थगोकपा
हर्निया	सारण, गांठ	हर्निया	अन्त्रवृद्धि	अंत्रबृद्धि	हार्निया	खोइरिन

तमिल, मलयालम, कन्नड़ भाषा में उपर्युक्त शब्दों के अर्थ

Edit with WPS Office

कांललै नोय	प्लेग	प्लेगु
कट्टिट,शिरंगू	परू, कुरू	कुरू
मूल वियादि	अर्शस्सु	मूलव्याधि
भास्कण	कोंकण्णु	मेललेगण्णु
कुमट्टल	मनंमरिप्पु	होट्टे तोलसु
नीरिलिव	मधुमेहम्	सिहिमूत्र
मुरिगे	मोचड़	मुरिगे
मेलेरिया	कुलिर् जुरं	चलिज्वर
मच्चम्	मरूकै	गंटु, मच्चे
काक्कै वालि	अपस्मारम्	अपस्मार
कण सदै	तिमिरम्	मोतीबिंदु
कपवाद जुरं	इन्फलुवन्सा	इन्फलुएंजा
बल्ड प्रेशर	रक्तसंपर्दम	ब्लड्प्रेशर
मेह नोय	रतिरोगम्	गुप्त रोग
मालैक्कण	मालक्कण्णु	इरूलगण्णु
कण् इमैक्कुल	कण्पुटिरक रोगम्	कण्णुनोवु
नुच्चुरतनोय	विषरक्तत	विषरक्तते
शादै वीक्कम	व्रणम्, फोड पुण्णु	गाय
कुडुल तिरूगुवलि	सूल	शूले
वीक्कम्	वीक्कम्	ऊत
कोलै	कफम्	कफ
कील् वादं	संधिवातम्	संधिवात
जन्नि	सन्निपातं	मलरोग
तलै वालि	तलवेदन	तलेनोवु
विक्कल	बिक्कलिके	बिक्कलिके
हर्णिय	हर्निया	हर्निया

Edit with WPS Office